ओ३म्

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 18 नवम्बर 2018

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र

सप्ताह रविवार, 18 नवम्बर 2018 से 24 नवम्बर 2018

कार्तिक शु. – 10 ● वि० सं०–2075 ● वर्ष 60, अंक 46, प्रत्येक मंगलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 194 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,119 ● पृ.सं. 1–12 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

डी.ए.वी. चेन्नई में अंधविश्वास निराकरण दिवस का आयोजन

कालांतर से समाज के स्वस्थ पुर्नगठन जैसे महत्त्वपूर्ण कार्य को पूर्ण करने हेतु आर्य समाज निरंतर कार्यशील रहा है। आज संपूर्ण भारतवर्ष में आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा **अंधकार से प्रकाश की ओर** जाते हुए अंधविश्वास निराकरण दिवस मना रही है। इसी कड़ी में डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल चेन्नई ने एक कार्यक्रम का आयोजन किया। कार्यक्रम का शुभारंभ वेद श्लोकों के पवित्र उच्चारण के साथ हुआ। कार्यक्रम की प्रथम प्रस्तुति विद्यार्थियों द्वारा प्रस्तुत नुक्कड़ नाटक रहा। **शुभ–अशुभ जन्मपत्री एवं वास्तु शास्त्र जैसे झूठे पाखंड का पर्दाफाश** बड़े ही सजीव एवं प्रभावशाली ढंग से ओजस्वी वाणी में किया गया।

वर्तमान समाज जिस तरह से बाह्य आडम्बरों का शिकार बनता हुआ दिग् भ्रमित हो रहा है, उसे सही दिशा दिखाना ही आर्य समाज का मूलमंत्र है। द्वितीय चरण के अंर्तगत वर्तमान परिस्थिति के साथ उचित सामंजस्य स्थापित करने हेतु सातवीं कक्षा के अभिवावकों एवं शिक्षकों के बीच वाद–विवाद शैली को क्रमबद्ध तरीके से आगे बढ़ाते हुए **ग्रहों पर बढ़ते हुए अंधविश्वास** पर तीखी आलोचना प्रस्तुत की गई। ग्रहों पर विश्वसनीयता मानव जीवन के विकास और समाज पर कितना दुष्प्रभाव डालती है, इसकी विवेचना विस्तृत रूप से की गई।

आज के प्रगतिशील युग में गुरुओं के प्रति बढ़ता हुआ अंधविश्वास उनकी चेतना को कुंठित करता जा रहा है। यह हमारी प्राचीन सभ्यता और संस्कृति की महानता पर ग्रहण के समान है। इसे दूर करने का बीड़ा उठाते हुए हमारे विद्यालय ने वाद–विवाद के अंतर्गत **गुरू भक्ति का अंधानुकरण उचित या अनुचित** विषय चुना। प्रतिभागियों ने ओजस्वी वाणी में चर्चा करते हुए इसके बुरे एवं अच्छे पहलुओं पर चर्चा की।

वर्तमान युग निरंतर कार्यरत रहने का युग है। ऐसी स्थिति में **शुभ–अशुभ मुहूर्त** पर निर्भर रहना समय की उपयोगिता को नष्ट करने जैसा है। इसके निवारण और जन चेतना में नवीन ऊर्जा का संचार करने हेतु वाद–विवाद कार्यक्रम के तीसरे चरण में अपने पर पूर्ण विश्वास एवं कार्य करने की प्रवृत्ति ही मनुष्य की सफलता का मार्ग है, विषय पर चर्चा रखी। समय की उपयोगिता ही मानव की सफलता की कुंजी है। इस मूल मंत्र का संचार शिक्षकगणों द्वारा बड़े ज्ञानवर्धक तरीके से किया गया।

कुंडली के चक्रव्यूह में फँसकर आज का सभ्य वर्ग दिशाहीन होकर भटकता जा रहा है। विवाह जैसा पुण्य कार्य **कुंडली मिलान** में फँसकर अपनी महत्त्वता खो रहा है। कुछ विवाहित जोड़े इसका शिकार बनकर बेमेल विवाह की त्रासदी झेल रहे हैं क्योंकि विचारों की असमानता उनके लिए अभिशाप बन जाती है। वाद–विवाद की अगली कड़ी का उद्देश्य कुंडली के दोष को न मानते हुए विचारों की एकता एवं सहभागिता जैसे मानवीय गुणों को प्रस्फुटित करना रहा।

कार्यक्रम के अंतिम चरण को आकर्षक एवं रुचिकर बनाने हेतु **तमिल लोक गायन शैली** का उपयोग किया गया। इसके अंतर्गत स्कूली विद्यार्थियों ने रूढ़ियों एवं कुरीतियों पर कुठाराघात करते हुए गायन शैली में अंधविश्वास निराकरण कार्यक्रम को सफलता की ऊँचाइयों तक पहुँचाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस प्रकार लोगों में जागरूकता फैलाने एवं वर्तमान जीवन को प्रकाशमय बनाने की दिशा में हमारे स्कूल ने अपनी अहम् भूमिका निभाते हुए आने वाले वर्षों में भी कार्यरत रहने का संकल्प लिया।

डी.ए.वी. विश्वविद्यालय जालंधर में दीवाली मेला आयोजित

डी.ए.वी. विश्वविद्यालय जालंधर में दीवाली मेला का आयोजन किया गया। इसमें विभिन्न डिपार्टमेंट के विद्यार्थियों के बीच प्रतियोगिताएं करवाई गई, साथ ही सभी विभागों द्वारा स्टॉल भी लगाया गया, जिसमें दीवाली को ध्यान में रखते हुए कई खाने की वस्तुएँ व हैंड क्राफ्ट चीज़े प्रदर्शित की गई। एक ही मंच पर विद्यार्थियों ने देश के कई डांस विधाएं प्रस्तुत कर अनेकता में एकता का संदेश दिया। दीवाली मेले का शुभारंभ संस्थान के ईडी राजन गुप्ता, रजिस्ट्रार डॉ. सुषमा आर्य, डीन अकादमिक देशबंधु गुप्ता, डीन स्टूडेंट वेल्फेयर डॉ. जसबीर ऋषि ने किया। राजन गुप्ता ने कहा कि पिछले कुछ समय में पर्यावरण काफी प्रदूषित हो गया है जिसके कारण कई समस्याएं देखने व सुनने को मिल रही है। इसीलिए विद्यार्थी इस बार प्रण ले कि वे पर्यावरण को ध्यान में रखकर दीवाली मनाएंगे। डॉ. आर्य ने कहा कि दीवाली मेले के माध्यम से एक ओर जहाँ विद्यार्थियों ने अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन किया वहीं पर्यावरण को बचाने के कई उपाय स्टॉल में दिखाकर पर्यावरण संरक्षण की सोच को दर्शाया है। इससे पता चलता है कि वर्तमान के युवा पर्यावरण को लेकर सजग है। डॉ. गुप्ता ने विद्यार्थियों से दीपावली की शुभकामनाएं देते हुए ग्रीन दीवाली मनाने की अपील की। सभी विजेताओं को टॉफी व सर्टिफिकेट देकर सम्मानित किया गया। इस अवसर पर विश्वविद्यालय के स्टॉफ सदस्य व विद्यार्थी उपस्थित रहे।

डिपार्टमेंट ऑफ जर्नलिज्म एंड मॉस कम्यूनिकेशन के विद्यार्थियों ने 2 हजार मिट्टी के दीये बांटकर विद्यार्थियों से परंपरागत दिवाली मनाने की अपील की। विभाग के अभिलक्ष्य ने बताया कि पिछले कुछ समय में लोग कैंडल व चाईनिज बल्ब जलाकर दीवाली मनाते है। जबकि भारत में मिट्टी के दीये जलाने की परंपरा रही है, देश में मिट्टी के दीये बनाकर हज़ारो लोग अपना जीवन यापन करते है। ऐसे में अगर हम थोड़ी सी बचत के लिए कैंडल व लड़ियों के बजाये मिट्टी के दीये जलाये, ताकि दीये बनाने वालों के घरों में भी दीवाली मन सके।

ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह रविवार, 18 नवम्बर 2018 से 24 नवम्बर 2018

दोनों हाथों से भर-भरकर दे

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

दिवो विष्ण उत वा पृथ्विया:, महो विष्ण उरोरन्तरिक्षात्।
हस्तौ पृणस्व बहुभिर्वसव्यै:, आप्रयच्छ दाक्षिणादोत सव्यात्।।

अथर्व 7.26.8

ऋषिः **मेधातिथि:**। देवता **विष्णु:**। छन्दः **त्रिष्टुप्।**

● **(विष्णो)** हे सव्रव्यापक परमात्मन्! **(दिव)** द्युलोक से **(उत वा)** और **(पृथिव्या:)** पृथिवी–लोक से [तथा] **(विष्णो)** हे विश्वान्तय्रमिन्! यज्ञ के देव! **(मह:)** महनीय **(उरो:)** विस्तीर्ण **(अन्तरिक्षात्)** अन्तरिक्ष–लोक से **(बहुभि:)**वहुत– से **(वसव्यै:)** ऐश्वर्य–समूहों से **(हस्तौ)** दोनों को **(पृणस्व)** भर ले। **(दक्षिणात्)** दाहिने हाथ से **(आ प्रयच्छ)** दान दे **(उत)** और **(सव्यात्)** बाएँ से [भी] (आ [प्रयच्छ]) दान दे।

● हे विष्णु! हे सर्वव्यापक! हे विश्वान्तर्यामिन्! हे विश्व–ब्रह्माण्ड के स्वामिन! तुम अपूर्व धनाधीश हो। विश्व के द्युलोक, अन्तरिक्ष–लोक और पृथिवी–लोक में जो धन बिखरा पड़ा है, वह सब तुम्हारा ही है। अतः तुम धन–कुबेर हो। एक और तुम धनपति हो ओर हम अकिंचन हैं। अतः हम चाहते हैं कि तुम अपने कोष में से दाहिने–बाएँ दोनों हाथों से भर–भरकर हमें दान दो। तुम्हारे रचे द्यु–लोक में प्रकाश का अनुपम पारावार भरा पड़ा है। वह प्रकाश तुम हमें भी प्रदान करो। तुम्हारे रचे विशाल अन्तरिक्ष–लोक में वायु और पर्जन्य का सागर उमड़ रहा है। उसमें से हमें भी प्राण–वायु और अमृतमय वृष्टि–जल प्रदान करो। तुम्हारे रचे पृथ्वी–लोक से सुवण, रजत, ताम्र अयस, हीरे, मोती आदि ऐश्वर्यों की निधियाँ भरी हुई हैं। वे ऐश्वर्य तुम हमें भी प्रदान करो। अल्प मात्रा में नहीं, प्रचुर मात्रा में प्रदान करो, क्योंकि हम ऐश्वर्यमय जीवन जीने की ही साध लिये हुए हैं।

पर हे विश्वव्यापी देव! हम केवल इन भौतिक ऐश्वर्यों का ही पाकर सन्तुष्ट नहीं हो जाना चाहते। हम शरीरस्थ द्यु–लोक, अन्तरिक्ष–लोक और पृथिवी–लोक के ऐश्वर्यों को भी पाने के लिए आतुर हो रहे हैं। हमारा अन्नमय कोश ही पृथिवी–लोक है, जिसमें शरीर की त्वचा से लेकर अस्थि–पर्यन्त सब ढ़ांचा आ जाती है। असका ऐश्वर्य है शारीरिक स्वास्थ्य और शारीरिक बल, जिसके बिना मनुष्य का जीवन–यापन,व्यान,उदान, समा, इन पांचों से तथा कर्मेन्द्रियों से मिलकर प्राणमय कोश बनता है। इसका ऐश्वर्य है प्रागण, अपानन आदि क्रियाओं का समुचित रूप से होते रहना तथा हस्त–पादादि कर्मेन्द्रियों को कार्य–क्षम बने रहना। मन और ज्ञानेन्द्रियों से मिलकर मनोमय कोश बनता है। इसका ऐश्वर्य है मन के माध्यम से ज्ञानेन्द्रियों का ज्ञान–प्राप्ति में सहायता होना तथा मन का सत्यसंकल्प करना। ज्ञानेन्द्रियों–सहित बुद्धि विज्ञानमयकोश कहलाता है। इसका ऐश्वर्य है ज्ञानेन्द्रियों से प्राप्त ज्ञान पर ऊहापोह करके निश्चयात्मक ज्ञान अर्जित करना। आनन्दमय कोश द्यु–लोक है, जहाँ हृदयपुरी में प्रतिष्ठित आत्मा के अन्दर ब्रह्म का वास है। इसका ऐश्वर्य है ब्रह्मानन्द की प्राप्ति। हे विष्णुदेव! तुम इन समस्त ऐश्वर्यों से भी भरपूर करने की कृपा करते रहो।

हे जगत्पिता! तुम निरैश्वर्य की अवस्था से पार करके हमें अधिकाधिक ऐश्वर्य प्रदान कर कृतार्थ करते रहो। ❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

भगवान शंकर और दयानन्द

● **महात्मा आनन्द स्वामी**

पिछले अंक में स्वामीजी ने बताया ब्रह्म को खोजने से पूर्व जिज्ञासु में चार गुण होने चाहियें। इन चार गुणों में से एक गुण है 'षट् सम्पत्ति'। पहली सम्पत्ति का नाम है 'शम'। वह शक्ति कि मनुष्य प्रत्येक दशा में शान्त रहे। प्रत्येक दशा में शान्त रहने के लिए मन को वश में रखना अत्यावश्यक है। दूसरा उपाय है योग–साधन। योग का अर्थ है व्यष्टि को समष्टि में मिला देना। अपने मन को, बुद्धि को, चित्त और प्राण को विश्व में फैले हुए इस समष्टि मन, समष्टि बुद्धि, समष्टि चित्त और समष्टि प्राण के साथ मिला देने से योग का पहला अंग पूर्ण होता है।

तीसरा साधन यह है कि किसी व्यक्ति को, किसी भी वस्तु को बुरा न समझो, किसी को कुदृष्टि से न देखो। जैसा दृष्टिगोचर होगा, वैसा ही तुम्हारा मन बनता जायेगा।

अब आगे ...

'शम' की सम्पत्ति को प्राप्त करने का चौथा साधन है प्राणायाम। पहले अपने घर में इसका अभ्यास करो। वास्तविकता को पहचानो। जो जड़ है उसका मोह छोड़ दो, अच्छी वस्तुओं के लिए इच्छा उत्पन्न करो, फिर एकान्त में जाकर अभ्यास करो। यदि घर में ही मन को ठीक शिक्षा न दोगे तो बाहर जाके शैतानी करेगा।

नारद जी एक बार नगर में आये (दिल्ली नगर में नहीं)। यहाँ के लोग बहुत अच्छे हैं। एक और नगर में आए। एक पुराना मित्र उन्हें मिला, संसार की विपत्तियों में फँसा हुआ। नारद जी ने कहा, "यहाँ संकट में पड़े हुए हो, आओ तुम्हें स्वर्ग ले चलूँ।" उसने कहा, "और क्या चाहिए!" दोनों पहुँच गए स्वर्ग में, जहाँ सुन्दर पत्तों वाला सुन्दर छाया वाला कल्पवृक्ष खड़ा था। नारद ने कहा, "तुम इस वृक्ष के नीचे बैठो, मैं अभी अन्दर से मिलकर आता हूँ।" नारद चले गए तो उस आदमी ने इधर–उधर देखा। सुन्दर वृक्ष, सुन्दर छाया, धीमी–धीमी शीतल वायु। उसने सोचा, 'कितना उत्तम स्थान है! यदि एक आरामकुर्सी होती तो मैं उस पर बैठ जाता।' वह था कल्पवृक्ष। उसके नीचे खड़े होकर जो इच्छा की जाय वह पूरी होती है। उसी समय पता नहीं कहाँ से एक आरामकुर्सी आ गई। वह उस पर बैठ गया। बैठकर उसने सोचा, 'एक पलंग होता तो थोड़ी देर के लिए लेट जाता मैं।' विचार करने की देर थी कि पलंग भी आ गया। वह लेट गया। लेटते ही सोचने लगा, 'घर में होता तो पत्नी से कहता, मेरी टाँगे दबा दे, मेरा सिर मल दे।' सोचते ही बहुत–सी अप्सराएँ वहाँ उपस्थित हो गईं। कोई पाँव दबाने लगी, कोई गीत गाने लगी, कोई नाचने लगी। उस आदमी ने उन सबको देखा तो सोचा, 'यदि इन सब स्त्रियों के साथ मेरी पत्नी मुझे देख ले तो झाड़ू लेकर मेरी पिटाई कर डाले।' सोचना अभी समाप्त भी न हुआ था कि हाथ में झाड़ू लेकर पत्नी आ गई। धड़ाधड़ उसको मारने लगी। अप्सराएँ भाग गईं। वह पलंग से उठकर दौड़ा। आगे–आगे वह, पीछे–पीछे झाड़ू को लिए हुए पत्नी। नारद जी ने लौटते हुए उसे दूर से देखा, पुकारकर बोले, "मूर्ख! सोचना ही था तो कोई अच्छी बात सोचते। यह क्या सोच बैठे तुम? यह कल्पवृक्ष है।"

सो भाई मेरे, प्राणायाम के कल्पवृक्ष के नीचे बैठकर अच्छी बात सोचना, बुरी बात नहीं सोचना। मन और प्राण का गहरा सम्बन्ध है। जहाँ एक जाता है वहाँ दूसरा भी जाता है। मन को शान्त करने के लिए प्राणायाम एक उत्तम साधन है। जगद्गुरु शंकर और महर्षि दयानन्द दोनों ने इसकी महिमा गाईं है। चार–चार प्रकार के प्राणायाम हैं– रेचक (श्वास को बाहर निकालना), तब बाहर का कुम्भक (श्वास को बाहर रोके रखना), तब पूरक (श्वास को अन्दर खींचना), तब अन्दर का कुम्भक (अन्दर खींचते हुए श्वास को अन्दर ही रोकना)। अन्दर का या बाहर का वह कुम्भक तीन मिनट का हो जाय तो मन हाथ बाँधकर खड़ा हो जायेगा, पूछेगा– क्या चाहते हो? तब हृदय में या भृकुटि में जहाँ भी ध्यान लगाओगे वहाँ प्रकाश दिखाई देगा। सामवेद में इसी प्रकाश का उल्लेख करते हुए कहा गया है, "मैं इन महान् प्रकाश का ध्यान करता हूँ।" यह जो दृष्टिगोचर होगा, आरम्भ में माया का प्रकाश होगा, प्रकृति का प्रकाश। इसके अन्दर प्रविष्ट हो जाओ, तब आत्मा का प्रकाश दिखाई देगा– अधिक शीतल और अधिक प्रकाशमान। उस प्रकाश में ओ३म् का आश्रय लेकर आगे बढ़ो। ओ३म् का जाप करते हुए या किसी और नाम का जाप करते हुए, ओ३म् को देखने का प्रयत्न करते हुए अथवा किसी अन्य वस्तु को देखने का प्रयत्न करते हुए आगे बढ़ो। तब आनन्द का द्वार खुल जायेगा, उसके दर्शन होंगे जिसके लिए योगी योग करते हैं, ज्ञानी ग्रन्थ पढ़ते हैं, ध्यानी वर्षों तक कठोर तपस्या करते हैं।

शेष पृष्ठ 05 पर ☞

सुसंगत जीवन पथ

● भद्रसेन

प्रत्येक हर स्थिति में प्रगति चाहता है और प्रगति में गति शब्द छिपा हुआ है। अच्छी गति के लिए आने–जाने का रास्ता सरल–स्पष्ट–सपाट–सक्षम–सुरक्षित और सुनिश्चित होना ज़रूरी है। अधिकतर दो तरह के रास्ते होते हैं, जिनको संगत और असंगत के नाम से कह सकते हैं। जो नगर, गाँव योजनाबद्ध रूप से बने होते हैं, उनके रास्ते संगत होते हैं, पर बिना किसी योजना के पहले से बसे हुए मुहल्लों, गाँवों, कस्बों के रास्ते अधिकतर असंगत होते हैं।

परिवहन के पथों की तरह जीवन के भी दो प्रकार के रास्ते होते हैं। सुसंगत जीवनपथ की दृष्टि से सुरक्षा सेना और पुलिस की व्यवस्था एक सुन्दर उदाहरण है। इनकी सारी व्यवस्था सुनिश्चित तथा संगत होती है, क्योंकि वह आधारभूत मूलभावना को सामने रख कर बनाई जाती है। सारे प्राचीन साहित्य को सामने रख कर जीवन के सुसंगत जीवनपथ पर जब हम विचार करते हैं, तो महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा प्रदर्शित जीवन पथ जीवन्त और सुसंगत सिद्ध होता है। इस जीवनपथ की एक यह बहुत बड़ी खूबी है, कि यह जहाँ शास्त्रसम्मत है, वहाँ वह तर्कसंगत भी है।

इसका एक स्पष्ट उदाहरण है– विवाह प्रक्रिया। इसके सम्बन्ध में सत्यार्थ प्रकाश के चतुर्थ समुल्लास में महर्षि ने विस्तारपूर्वक विवेचन किया है। इसके लिए जहाँ वेदादि शास्त्रों के प्रमाण दिए हैं, वहाँ युक्ति एवं तर्क से भी विचार किया है। उदाहरण के लिए यह एक उद्धरण पर्याप्त होगा– 'आठ, नौ और दशवें वर्ष पर्यन्त विवाह करना निष्फल है, क्योंकि सोलहवें वर्ष के पश्चात् चौबीसवें वर्ष पर्यन्त विवाह होने से पुरुष का वीर्य परिपक्व, शरीर बलिष्ठ, स्त्री का गर्भाशय पूरा और शरीर भी बलयुक्त होने से सन्तान उत्तम होते हैं।' समु. 4, पृ. 76। स्वा. वेदानन्द सम्पादित संस्करण।

इसका दूसरा उदाहरण पारस्परिक अभिवादन का लिया जा सकता है। जब एक व्यक्ति दूसरे से मिलता है तो आपस में मिलने पर स्वाभाविक रूप से आदर की भावना उभरती है। जिससे परस्पर प्रसन्नता, सम्मान और अपनापन आता है। अतएव सभी देशों, वर्गों, धर्मों में आपस के अभिवादन के लिए कोई न कोई शब्द और शारीरिक चेष्टा आदि के अनेक रूप प्रचलित हैं। एतदर्थ महर्षि दयानन्द का विचार है– ''बड़ों को मान्य दें, उनके सामने उठकर जाके उच्चासन पर बैठावें, प्रथम 'नमस्ते' कहें। –सत्यार्थ समु. 2, पृ.36

'दिन या रात में जब–जब प्रथम मिलें वा पृथक हों तब–तब प्रीति पूर्वक 'नमस्ते' एक दूसरे से करें।' – सत्यार्थ 4, 89

अभिवादन के लिए 'नमस्ते' शब्द का प्रयोग अवसर के अनुरूप, तर्कसंगत, शास्त्रसम्मत और आधारभूत मूलभावना से हर तरह मेल खाता है।

सुसंगतपन की कसौटी का तीसरा उदाहरण है– सामूहिक नाम– आर्य। व्यवहार में सुविधा की दृष्टि से प्रत्येक का अपना–अपना नाम होता है। प्रत्येक का जहाँ अपना–अपना वैयक्तिक नाम होता है, वहाँ सामूहिक दृष्टि से भी प्रत्येक समूह का एक नाम होता है। जिस–जिस दृष्टि से आपस में एकता होती है, उस–उस दृष्टि से एक सामूहिक नाम भी होता है। जैसे कि एक ही धर्म, देश, राजनीतिक दल होने से एक सांझा नाम भी मिलता है। ऐसे ही कारोबार–वर्ण–यूनियन के आधार पर ब्राह्मण, क्षत्रिय, फौजी, दुकानदार आदि नाम हैं। इन समूहों की तरह इन–इन समूहों का भी एक सामूहिक नाम होना चाहिए। अतः महर्षि दयानन्द का सिद्धान्त है कि हमारा सामूहिक नाम आर्य है, क्योंकि हमारा जितना भी मान्य साहित्य है, उसमें आर्य शब्द का सर्वत्र प्रयोग मिलता है। यह प्रयोग इतना अधिक प्रभावपूर्ण, सार्वभौमिक, सार्वकालिक तथा सार्वजनिक है कि किसी भी देश का नागरिक जहाँ–कहीं इसका प्रयोग कर सकता है। प्रयोग करने वाले के जीवन की प्रत्येक प्रगति, आकांक्षा और भावना को आर्य शब्द पूरी तरह से अभिव्यक्त करता है। क्योंकि आर्य शब्द का सीधा सा अर्थ है– अच्छा, भला, श्रेष्ठ। अतः नमस्ते की तरह आर्य शब्द से भी स्पष्ट होता है कि महर्षि के सिद्धान्त शास्त्रसम्मत और तर्कसंगत हैं।

इन सामान्य बातों की तरह जब हम जीवन के मूलभूत तत्त्वों, सिद्धान्तों के सम्बन्ध में विचार करते हैं तो पता चलता है कि महर्षि दयानन्द ने जीवन के सर्वांगीण विकास और निखार के लिए भी एक **सुसंगत जीवन पथ** दर्शाया है। जो एकेश्वरवाद, मनुष्य जाति की एकता, धर्म–अच्छे आचरण का नाम है और सभी महापुरुषों का सम्मान के रूप में है। **'सुसंगत जीवन पथ'** के ये आधारभूत मूलतत्त्व हैं, आइए! इन पर कुछ संक्षिप्त–सा विचार करें।

एकेश्वरवाद – इसका अर्थ है, एक ईश्वर की मान्यता। हमारे चारों ओर पृथिवी, जल, अग्नि, वायु, सूर्य आदि अनेक प्राकृतिक पदार्थ हैं। जो हम जैसे किसी मनुष्य ने नहीं बनाए। इन प्राकृतिक पदार्थों की रचना, व्यवस्था किसी के करने से ही होती है। इन की व्यवस्था बताती है, इसका कोई न कोई कर्ता–धर्ता और नियामक है और वही ईश्वर है। ईश्वर के प्राकृतिक कार्य सभी स्थानों पर एक रूप में ही हो रहे हैं। तभी तो सभी जगह अन्न, फल, फूल, खनिज, धातुएँ एक रूप में ही मिलती हैं। यह एकरूपता एवं समान व्यवस्था अपने उत्पादक, व्यवस्थापक की एकता को ही सिद्ध करती है।

इसी प्रकार सभी प्राणियों की अपनी–अपनी शरीर–रचना, अंग संस्थान और उन का कार्य एक सा ही है। प्रदेश का सामान्य–सा ही प्रभाव होता है। यह एकरूपता, समानता भी अपने कर्ता की एकता को ही सिद्ध करती है। शास्त्रों में एक जगत–कर्ता, धर्ता, संहर्ता का वर्णन भी प्राप्त होता है। हाँ, वहाँ प्रकरण के अनुरूप उसके गुण, कर्म, स्वभाव को बताने के लिए भिन्न–भिन्न नामों का संकेत मिलता है, पर उन नामों का नाम भी एक ही है। इसके विशेष विवेचन के लिए **'वेद की कुञ्जी** – प्रथम समुल्लास' पढ़िए

ईश्वर के एक होने से ही उसके सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान आदि गुण–चरितार्थ होते हैं। एक से अधिक होने पर वह सर्वव्यापक आदि गुणवाला कैसे हो सकता है तथा ऐसे गुणयुक्त ईश्वर को मानने से ही उसकी कर्मफल व्यवस्था पर विश्वास जमता है। इसी विश्वास पर कोई सदा शुभ कर्मों में जुटा रहता है।

एकेश्वरवाद की मान्यता के अनुसार महर्षि का यह दृढ़ विश्वास है कि ईश्वर के कार्य जब अन्य कोई नहीं कर सकता है तो ईश्वर की इसी दया को ध्यान में रखते हुए हमें कृतज्ञता के रूप में ईश्वर की ही पूजा, भक्ति, उपासना करनी चाहिए और प्रभु से ही प्रार्थना करनी चाहिए। भक्ति द्वारा ईश्वर के साथ अपना निकट सम्बन्ध अनुभव करने से आत्मिक शक्ति और शान्ति मिलती है। ईश्वर के स्थान पर अन्य देवी–देवताओं, अवतारों, पैगम्बरों, गुरुओं, बाबों, माताओं की भक्ति, पूजा, उपासना नहीं करनी चाहिए। अर्थात् हमारी इस भक्ति, पूजा, उपासना और प्रार्थना का एकमात्र आधार, ईष्टदेव ईश्वर ही है।

मानव जाति की एकता – सभी मनुष्यों के शरीर, अंगसंस्थान एवं उनका कार्य एक–सा ही है। भौगोलिक दृष्टि से रूप, रंग का बहुत कम ही अन्तर होता है। सभी के हृदय में सुख, शान्ति, स्नेह की एक सी ही भावना होती है। सभी के खून का रंग लाल और आत्मा सब की अज़र–अमर ही है। अतः प्रदेश, रंग, धर्म, वर्ग, भाषा के भेद के आधार पर परस्पर भेदभाव नहीं करना चाहिए।

मानव समाज के स्त्री–पुरुष में भी सामान्य सा ही भेद होता है। इतने भेद से कोई ऊँचा–नीचा नहीं हो जाता। वस्तुतः ये दोनों समाज के महत्त्वपूर्ण अंग हैं और दोनों का अपना–अपना महत्त्व है। दोनों को समान रूप से एक दूसरे के सहयोग की आवश्यकता होती है। एक के बिना दूसरा अधूरा है। अतः इस समानता और पूरकता के आधार पर यह सरलता से कहा जा सकता है कि एक मानव से दूसरे मानव और स्त्री–पुरूष में शिक्षा, योग्यता, सदाचार आदि के कारण ही छोटे–बड़े या अच्छे–बुरे अर्थात् असमानता या हल्के होने का अन्तर होता है।

अतः मानव जाति की एकता, समानता के कारण सबको समान रूप से प्रगति एवं प्रगतिदायक शिक्षा, धर्म आदि का समान अवसर और अधिकार प्राप्त होना चाहिए। ऐसा वहीं हो सकता है, जहाँ सब में समानता की भावना होती है। ऐसा व्यक्ति फिर किसी से सामाजिक उच्चता–नीचता और जन्मना स्पृश्यता–अस्पृश्यता का भेदभाव नहीं करता। जब किसी व्यक्ति में यह विश्वास पूर्ण रूप से होता है कि सारी मानव जाति एक जैसी ही है। तब वह किसी को केवल किसी परिवार, वर्ग में जन्म लेने के कारण या स्त्री होने से या किसी विशेष प्रदेश, भाषा, धर्म से सम्बन्ध रखने के कारण किसी को अछूत या हल्का नहीं मानता और न ही इस आधार पर किसी से ईर्ष्या, घृणा, द्वेष करता है। ऐसा करने से परस्पर दूरी बढ़ती है और तब सामाजिक कार्यों में स्नेह, सद्भाव, सहयोग प्राप्त होना कठिन हो जाता है। इससे परस्पर एकता, संगठन भी नहीं पनपता है।

दूसरी ओर जब कोई किसी को केवल विशेष परिवार, वर्ग में जन्म लेने के कारण या पुरुष होने से या विशेष धर्म, भाषा, प्रदेश से जुड़ा होने के कारण अधिक अच्छा मानता है तो ऐसे विशेष अपने आप को दूसरों से अलग रखने लगते हैं। इससे आपस की एकता भी सुदृढ़ नहीं होती। मानव समाज की स्थिति सामाजिक दृष्टि से हाथ की अंगुलियों की तरह है, जो आपस में काफी भिन्नता रखती हैं, उनमें से कोई लम्बी है, तो कोई छोटी, एक मोटी है तो दूसरी पतली, पर वे जो भी कार्य करने लगती हैं, तो उस समय एक रूप में आ जाती हैं। ऐसे ही संगठन, एकता की दृष्टि से सामाजिक कार्य में समानता लानी चाहिए।

धर्म –अच्छे आचरण का नाम है – सुसंगत जीवन पथ का तीसरा मूलमन्तव्य है– सदाचार, धर्म। धर्म वस्तुतः अच्छे आचरण का नाम है और आचरण को अच्छा बनाने के लिए ही धर्म की अपेक्षा है। निःसन्देह शास्त्रों में धर्म शब्द अनेक अर्थों में आता है, पर धर्म का मुख्य अर्थ है– सत्य, ईमानदारी, स्नेह, सहयोग आदि। ये वे गुण हैं, जिनको अपने स्वभाव का अंग बनाने से व्यक्ति, परिवार, समाज–सुखी, व्यवस्थित होते हैं। धर्म प्रेरणा द्वारा व्यक्ति के स्वभाव को सुन्दर बनाता है। वह व्यक्ति पर कुछ थोपता नहीं, अपितु स्वभाव का अंग बनाता है।

जैसे कि सामाजिक के नाते हमारे आपस में माता, पिता, पुत्र, भाई, बहन,

शेष पृष्ठ 04 पर ☞

इन्द्राग्नी ऋषि

● शिवनारायण उपाध्याय

यजुर्वेद अध्याय 13 के मंत्र में 22 से 25 तक के मंत्रों की दृष्टि इन्द्राग्नि है। इन मंत्रों में विज्ञान, सृष्टि रचना, पति–पत्नी का आपसी व्यवहार आदि विषयों पर गहन चर्चा की गई है।

यास्तेऽअग्ने सूर्य्ये रूचो दिवमातन्वन्ति रश्मिभिः।
ता भिर्नोऽअद्य सर्वाभी रूचे जनाय नरकृधि।।

पदार्थ– हे (**अग्ने**) अग्नि के समान तेजस्वी विदुषी स्त्री। (**याः**) जो (**ते**) तेरी रुचि है (**ताभिः**) उन (**सर्वाभि**) सब रुचियों से युक्त (**न**) हमको जैसे (**रुच**) दीप्तियाँ (**सूर्य्ये**) सूर्य में (**रश्मिभीः**) किरणों से (**दिवम्**) प्रकाश को (**आतन्वन्ति**) अच्छे प्रकार विस्तार युक्त करती है। वैसे तू भी अच्छे प्रकार विस्तृत सुख युक्त और (**अद्य**) आज (**रुचे**) रुचि कराने वाले (**जनाय**) मनुष्यों के लिए (**नः**) हम लोगों को प्रीति युक्त (कृधि) कर।

भावार्थ– यह मंत्र वाचकलुप्तोपमालंकार है। जैसे सौर मण्डल में सूर्य की किरणें सब वस्तुओं को प्रकाशित करती है और प्राणियों में रुचि उत्पन्न करती है वैसे ही एक विदुषी श्रेष्ठ स्त्री घर के सब कार्यों का प्रकाश करती है। वह परिवार में सबको अपनी अपनी रुचि के अनुकूल कार्य देकर उनमें प्रसन्नता का भाव उत्पन्न करती है। फलस्वरूप सभी स्त्री–पुरुषों में प्रीति उत्पन्न होती है और इससे परिवार का कल्याण होता है।

विज्ञान का विकास कब होगा? इस पर वेद का कथन है–

या वो देवाः सूर्य्ये सचो गोष्वश्वेषु या रूचः।
इन्द्राग्नी ताभिः सर्वाभी रूचं नो धत्त बृहस्पते।।

यजु. 13.23

पदार्थ– हे (**देवाः**) विद्वानो। आप सब लोग (**याः**) जो (**वः**) आपकी सूर्य्ये में (**रुचः**) रुचि और (**याः**) जो (**गोषुः**) गायों और (**अश्वेषु**) घोड़ों आदि में (**रुचः**) प्रीति है (**ताभि**), उन (**सर्वाभिः**) सब रुचियों से (**नः**) हमारे बीच (**रूचम्**) कामना, (**इन्द्राग्नी**) बिजली और सूर्यवत् अध्यापक और उपदेशक जैसे धारण करें वैसे (**धत्त**) धारण करो। हे (**बृहस्पते**) पक्षपात छोड़कर परीक्षा कराने वाले पूर्ण विद्या युक्त आप (**नः**) हमारी परीक्षा कीजिए।

भावार्थ– हे विद्वानो। आप सब लोग जो आपकी सूर्य में रुचि और जो गौओं और घोड़ों आदि में प्रीति है। उन सब रुचियों में हमारे बीच, जैसी रुचि विद्युत और सूर्य के समान तेजस्वी अध्यापक और उपदेशक धारण करें, वैसे धारण करो। आप पक्षपात छोड़कर हमारे ज्ञान की परीक्षा लो। क्योंकि जब तक परीक्षा नहीं होती तब तक यह नहीं जाना जा सकता है कि कोई व्यक्ति पूर्ण ज्ञान सम्पन्न है अथवा इसका ज्ञान अधूरा है।

अगले मंत्र में सुख कैसे प्राप्त होगा? इसका वर्णन है–

विराड् ज्योतिरधारयत् स्वराड ज्योतिरधारयत्।
प्रजापतिष्टवा सादयतु पृष्ठे पृथिव्या ज्योतिष्मतीम्।
विश्वस्मै प्राणायापावाय व्यानाय विश्वं ज्योतिर्यच्छ।
अग्निष्टे ऽ धिपतिस्तया देवतयाङ्गिरस्वद
ध्रुवासीद।।

यजु. 13.24.

पदार्थ– हे विराट अनेक प्रकार की विद्याओं में प्रकाशमान स्त्री। (**ज्योतिः**) विद्या की उन्नति को (**अधारयत्**) धारण कर, करावे जो (**स्वराट्**) सब धर्म युक्त व्यवहारों में शुद्ध आचारवान् पुरुष, (**ज्योतिः**) विद्युत आदि के प्रकाश को (**अधारयत्**) धारण करे, करावे वे दोनों स्त्री–पुरुष सम्पूर्ण सुखों को प्राप्त होवें। हे स्त्री। जो (**अग्निः**) अग्नि के समान तेजस्वी विज्ञान युक्त (**ते**) तेरा (**अधिपतिः**) स्वामी है (**तया**) उस (**देवतया**) सुन्दर देव स्वरूप पति के समान तू (**अङ्गिरस्वत्**) सूत्रात्मा वायु के समान (**ध्रुवा**) दृढ़ता से (**सीद**) हो। हे पुरुष। जो अग्नि के समान तेज धारिणी तेरा रक्षा करने वाली तेरी पत्नी है उस देवी के साथ तू प्राणों के समान प्रीति पूर्वक निश्चय करके स्थित हो। हे स्त्री। (**प्रजापतिः**) प्रजा का रक्षक तेरा पति (**पृथिव्याः**) भूमि के (**पृष्ठे**) ऊपर (**विश्वस्मै**) सब (**प्राणाय**) सुख की चेष्टा से हेतु (**अपानाय**) दुःख हटाने का साधन (**व्यानाय**) सब श्रेष्ठ गुण कर्म और भाव के प्रचार के हेतु प्राण विद्या के लिए जिस (**ज्योतिष्मतिम्**) प्रशंसित विद्या के ज्ञान से युक्त (**त्वा**) तुझको (**सादयतु**) उत्तम अधिकार पर स्थापित करे सो तू (**विश्वम्**) समग्र (**ज्योतिः**) विज्ञान को (**यच्छ**) ग्रहण कर और इस विज्ञान की प्राप्ति के लिए अपने पति को स्थिर कर।

भावार्थ– इस मंत्र में बतलाया गया है कि स्त्री, पुरुषों को चाहिए कि परस्पर प्रीति के साथ रहते हुए एक दूसरे के कर्त्तव्यों का बोध कराते हुए और एक दूसरे का सहयोग करते हुए संसार में सुखी जीवन यापित करते हुए विज्ञान का भी विकास करते रहें।

अगले मंत्र में मधु (चैत्र) और माधव (वैशाख) माह जिन्हें मिला कर वसन्त ऋतु बनती है का वर्णन किया गया है।

मधुश्च माधवश्च वासन्तिकावृतऽअग्नेरन्तः
श्लेषोऽसिकल्पतां।
द्यावा पृथिवी कल्पन्तामापऽओषधय
कल्पतामग्नयः पृथङ्
मम ज्यैष्ठयाय सव्रताः। येऽ अग्नयः
समनसोऽन्तरा
द्यावा पृथिवीऽइमे वासन्तिकावृतऽ अभि
कल्पमानाऽइन्द्रमिव देवाऽ
अभि संविशन्तु तया देवतयाङ्गिर
स्वद् ध्रुवे सीदतम्।।

यजु. 13.25.

पदार्थ– जैसे (**मम**) मेरे (**ज्येष्ठ्याय**) ज्येष्ठ महीने में व्यवहार वा मेरी श्रेष्ठता के लिए जो (**अग्नेः**) गरती के निमित्त अग्नि में उत्पन्न होने वाले जिनके (**अन्तः श्लेषः**) भीतर बहुत प्रकार के वायु का सम्बन्ध (**असि**) होता है वे (**मधु**) मधुर सुगबन्ध युक्त चैत्र (**च**) और (**माधवः**) मधुर आदि गुण का निमित्त वैशाख (**च**) इनके सम्बन्धी पदार्थ युक्त (**वासंतिक**) वसन्त महीने में हुए (**ऋतु**) सबको सुख प्राप्ति के साधन ऋतु सुख के लिए (**कल्पेताम्**) समर्थ होवे। जिन चैत्र और वैशाख महीनों के आश्रम से (**द्यावा–पृथिवी**) सूर्य और पृथ्वी (**आपः**) जल भी भोग में (**कल्पन्ताम्**) आनन्द वदायक हों। (**पृथक्**) भिन्न भिन्न (**ओषधयः**) यवादि अथवा सोमलता आदि ओषधि और (**अग्नयः**) विद्युत आदि अग्नि भी (**कल्पन्ताम्**) कार्य साधक होवें। हे (**सव्रताः**) निरन्तर वर्तमान सत्यभाषणादि व्रतों से युक्त (**समनसः**) विज्ञान वाले (**देवाः**) विद्वान्। (**ये**) जो लोग (**वासन्तिकौ ऋतु**) वसन्त ऋतु में हुए चैत्र और वैशाख और पूर्वक से (**अन्तरा**) बीच में हुए (**अग्नयः**) अग्नि हैं उनको (**अभि कल्पमानाः**) सम्मुख होकर कार्य में युक्त करते हुए आप लोग (**इन्द्र मिव**) जैसे उत्तम ऐश्वर्य प्राप्त हों जैसे (**अभिसंविशन्तु**) सब ओर से प्रवेश करो जैसे (**इमे**) ये (**द्यावा पृथिवी**) प्रकाश और भूमि (**तया**) उस (**देवतया**) परम पूज्य परमेश्वर रूप देवता के सामर्थ्य के साथ (**अङ्गिरस्वत्**) प्राण के समान (**ध्रुवे**) दृढ़ता से वर्तते हैं वैसे तुम दोनों स्त्री–पुरुष सदा संयुक्त (**यदितम्**) स्थिर रहो।

भावार्थ– इस मंत्र में यह बतलाया गया है कि स्त्री–पुरुष वसन्त ऋतु में किस प्रकार मिल कर रहें।

73 शास्त्री नगर दादाबाड़ी,
कोटा (राज.)

☞ *पृष्ठ 03 का शेष*

सुसंगत जीवन ...

मित्र आदि के रूप में सम्बन्ध हैं। आपस के सम्बन्ध के अनुरूप आचरण करने से ही सामाजिक सम्बन्ध जहाँ सुन्दर बनते हैं, वहाँ परस्पर सहयोग, स्नेह भी मिलता है। अतएव इस व्यवहार एवं सम्बन्ध को भी धर्म कहते हैं।

इसी प्रकार आपस में एक दूसरे के साथ सत्य और प्रिय बोलने को मनुस्मृति में परखा हुआ सनातन धर्म कहा है। कर्मकाण्ड, विश्वास, सिद्धान्त, स्वभाव और आचरण आदि धर्म के अनेक अर्थ हैं, पर इनमें से **'आचारः परमो धर्मः'** मनुस्मृति, 108 के अनुसार आचरण सब से मुख्य अर्थ है और तभी मनु. 6, 92 में धृति, क्षमा, संयम, सत्य आदि आचार की बातों को धर्म की पहचान बताया है। धर्म का यह आचार पक्ष ही ऐसा है, जिसके सम्बन्ध में सभी धर्म एक मत हैं तथा सभी धर्म इनको स्वीकार करते हैं। हाँ, धर्म नदी के पुल, नौका की तरह जीवन यात्रा को सरल बनाता है। विशेष विचार के लिए 'सरल–सुखी जीवन' देखिए।

सभी महापुरुषों का सम्मान – संसार में समय–समय पर अनेक विशेष व्यक्ति हुए, जिन्होंने मानव जाति को सुखी, विकसित बनाने के लिए सामाजिक, साहित्यिक, धार्मिक, आर्थिक, शैक्षणिक, राजनीतिक और भौतिक विज्ञान आदि के क्षेत्र में विशेष कार्य किया। अपने समय और स्थान पर जिसने जिस भी क्षेत्र में जैसा योगदान दिया है, वह अपने योगदान के अनुरूप सभी के सम्मान का पात्र है। क्योंकि उन व्यक्तियों का योगदान ही आज के विकसित रूप को यहाँ तक पहुँचाने में सहयोगी बना है। जैसे कि जार्ज स्टीफंस, जेम्स वाट द्वारा आविष्कृत इन्जन आज के विकसित इंजनों के विकास में कारण बना है।

जिस महापुरुष ने जितने तप–तपकर जैसे–कैसे कष्ट सह कर जितनी शिक्षा, योग्यता अर्जित की तथा अपनी अर्जित योग्यता से संयम के साथ मानव जाति के हित का जैसा कार्य किया। वह तदनुरूप सत्कार के योग्य है। वस्तुतः जनता को जितना लाभ हुआ यह बात जहाँ महत्त्व की है, वहाँ सेवा करने वाले ने कितने संयम से सेवा की, यह एक विशेष महत्त्व की बात है। क्योंकि–विकार के अवसर आने पर भी जो अपने आप को भ्रष्ट नहीं होने देते, वे और भी अधिक महत्त्वपूर्ण हैं।

महापुरुषों द्वारा विविध क्षेत्रों में किए गए महान कार्यों के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करनी चाहिए। हाँ, अब क्या अनुकरणीय है और क्या केवल स्मरणीय है? इसका निर्णय तो आज की विकसित परिस्थिति के अनुरूप ही होना चाहिए, न कि केवल अपनेपन के आधार पर या प्राचीनता से। इसीलिए महर्षि ने अपनी रचनाओं में श्रीराम, कृष्ण, भोज, शिवा, ईसा, नानक आदि की उस–उस विशेष देन के कारण प्रशंसा की है। बिना किसी भी यथार्थ आधार के किसी भी महापुरुष की निन्दा करने वालों की निन्दा की है और इसी दृष्टि से पुराणों को पसन्द नहीं किया। क्योंकि वहाँ अधिकतम की अपने से भिन्न होने के कारण निन्दा प्राप्त होती है।

इस संक्षिप्त विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि महर्षि दयानन्द ने वैयक्तिक एवं सामाजिक जीवन को समुन्नत बनाने के लिए एक ऐसा सुसंगत राजपथ दर्शाया है, जो शास्त्रसम्मत तथा तर्कसंगत है।

182 शालीमार नगर
होशियार पुर, पंजाब

परम आस्तिक एवं सत्योपासक महर्षि दयानन्द ने परम नास्तिक चार्वाक मत की सत्य बातों को स्वीकार कर आर्यत्व का परिचय दिया

● भावेश मेरजा

आर्य समाज के प्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती परम आस्तिक थे। वे वेदों को ईश्वर प्रणीत ज्ञान मानते थे। ईश्वर, वेद, कर्मफल, पुनर्जन्म, मोक्ष आदि को वे मानते थे। उन्होंने आर्य समाज का गठन आस्तिकवाद की ही बुनियाद पर किया था। आर्य समाज के प्रथम तीन नियम से यह बात भली–भांति सिद्ध होती है। महर्षि नास्तिकता के निवारण एवं आस्तिकता के प्रतिपादन के लिए आजीवन प्रयत्नशील रहे। उनके प्रमुख ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश का अधिकांश ईश्वर की सत्ता का प्रतिपादन, उसके सत्य स्वरूप का विवेचन, उसकी प्राप्ति के साधन तथा उसके सम्बन्ध में प्रवर्त्तमान विभिन्न भ्रान्तियों का निराकरण आदि विषयों को ही समर्पित है।

महर्षि को जब इस बात का पता चला कि थियोसोफिकल सोसायटी के संस्थापक द्वय – कर्नल ऑल्काट और मैडम ब्लैवेट्स्की ईश्वर को नहीं मानते हैं तो उन्होंने तत्काल उन लोगों को एक चिट्ठी लिखी जिसमें उन्होंने लिखा है – "हम नास्तिकों के खण्डन करने में आलस्य करना पाप समझते हैं।"

सत्यार्थ प्रकाश की भूमिका में महर्षि ने लिखा है – "यह चार्वाक सबसे बड़ा नास्तिक है। उसकी चेष्टा को रोकना आवश्यक है क्योंकि जो मिथ्या बात न रोकी जाय तो संसार में बहुत–से अनर्थ प्रवृत्त हो जाय।"

उपर्युक्त दोनों बातों से यह स्पष्ट होता है कि महर्षि दयानन्द नास्तिकता को बहुत बड़ा दोष मानते थे और उसे संसार से दूर करना चाहते थे।

सत्यार्थ प्रकाश के 12वें समुल्लास में उन्होंने बौद्ध तथा जैन मतों से पूर्व चार्वाक मत की समालोचना की है, जिसके मूल प्रचारक के रूप में उन्होंने किसी बृहस्पति नामक पुरुष का उल्लेख किया है। इस समुल्लास में महर्षि ने चार्वाक द्वारा किया गया ईश्वर, वेद, पुनर्जन्म, परलोक, यज्ञ आदि के निषेध एवं खण्डन को अनुचित बताया है और उसके तथाकथित 'दर्शन' की भी प्रबल आलोचना की है।

महर्षि ने नास्तिकवादी, भौतिकवादी चार्वाक का खण्डन तो किया ही है किन्तु न्याय दृष्टि पूर्वक! इसका प्रमाण यह है कि सत्य के ग्रहण करने में सर्वदा उद्यत रहने वाले महर्षि ने चार्वाक की कुछ बातों को ठीक भी बताया है और मान्य भी किया है। जैसे कि –

(1) चार्वाक ने त्रिदण्ड और भस्म लगाने को बुद्धि और पुरुषार्थ रहित पुरुषों द्वारा अपनी जीविका के लिए बनाए जाने की बात लिखी है। इसको मान्य करते हुए महर्षि ने लिखा है – "जो त्रिदण्ड और भस्म धारण का खण्डन है, सो ठीक है।"

(2) चार्वाक के 'लोकसिद्ध राजा ही परमेश्वर है' इस मन्तव्य को अर्ध सत्य के रूप में लेते हुए महर्षि ने लिखा है – "यद्यपि राजा को ऐश्वर्यवान् और प्रजा पालन में समर्थ होने से श्रेष्ठ माने तो ठीक है, परन्तु जो अन्यायकारी पापी राजा हो उसको भी परमेश्वरवत् मानते हो तो तुम्हारे जैसा कोई मूर्ख नहीं।"

(3) '**पशुश्चेन्निहतः स्वर्गं... स्वपिता यजमानेन...**' इस श्लोक के माध्यम से चार्वाक ने प्रश्न उपस्थित करते हुए कहा है कि – "जो यज्ञ में पशु को मार होम करने से वह स्वर्ग को जाता हो तो यजमान अपने पितादि को मार, होम करके स्वर्ग को क्यों नहीं भेजता?"

पुनः '**मृतानामपि जन्तूनां... गच्छतामिह जन्तूनां...**' इस श्लोक के द्वारा चार्वाक मृतक श्राद्ध का खण्डन करता हुआ कहता है – "जो मरे हुए जीवों का श्राद्ध और तर्पण तृप्ति कारक होता है तो परदेश में जाने वाले मार्ग में निर्वाहार्थ अन्न, वस्त्र और धनादि को क्यों ले जाते हैं? क्योंकि जैसे मृतक के नाम अर्पण किया हुआ पदार्थ स्वर्ग में पहुँचता है तो परदेश में जाने वालों के लिए उनके सम्बन्धी भी घर में उनके नाम से अर्पण करके देशान्तर में पहुँचा देवें। जो यह नहीं पहुँचता तो स्वर्ग में वह क्यों पहुँच सकता है?"

चार्वाक के इन विचारों का अनुमोदन करते हुए महर्षि लिखते हैं – "पशु मारके होम करना वेदादि सत्य शास्त्रों में कहीं नहीं लिखा और मृतकों का श्राद्ध तर्पण करना कपोल कल्पित है। क्योंकि यह वेदादि सत्य शास्त्रों के विरुद्ध होने से भागवतादि पुराण मत वालों का मत है, इसलिए इस बात का खण्डन अखण्डनीय है।"

इतना ही नहीं, सत्यार्थ प्रकाश के 11वें समुल्लास में यज्ञों में की जाने वाली पशु हिंसा का खण्डन करते हुए महर्षि ने चार्वाक प्रदत्त उपर्युक्त युक्तियों की सहायता ली है। महर्षि ने चार्वाक प्रदत्त इन बातों को 'युक्ति सिद्ध उपदेशों' की संज्ञा दी है।

(4) '**ततश्च जीवनोपायो...मृतानां प्रेतकार्याणि...**' इस श्लोक में चार्वाक ने दशगात्रादि मृतक क्रियाओं को ब्राह्मणों द्वारा अपनी जीविका के लिए किया गया उपाय या लीला बताया है। महर्षि ने चार्वाक की इस बात को मान्य करते हुए अपनी टिप्पणी में लिखा है – "हाँ, ब्राह्मणों ने प्रेत कर्म अपनी जीविकार्थ बना लिया है, परन्तु वेदोक्त न होने से खण्डनीय है।"

यहाँ यह तथ्य भी ध्यातव्य है कि महर्षि की दृष्टि में चार्वाक, बौद्ध, जैन आदि मतों के द्वारा की जाने वाली वेद निन्दा का मूल कारण वेदों के नाम पर अपना प्रयोजन सिद्ध करने वाले वेदों के झूठे टीकाकार या व्याख्यानकर्ता हैं, जिन्होंने वेदों की भ्रष्ट व्याख्याएँ प्रस्तुत कर समाज में वेदों के प्रति अनावश्यक भ्रम, अनास्था, असन्तोष और तिरस्कार के भाव पैदा होने का स्थान बना दिया। महर्षि का मन्तव्य है कि महीधर सदृश वाममार्गी भ्रष्ट लोगों के द्वारा की गई वेदों की प्रमाण शून्य अशुद्ध व्याख्याएँ ही चार्वाक आदि वेद विरोधी मतों के उत्थान का कारण बनी। इसलिए चार्वाक द्वारा की गई वेद निन्दा यथा – वेदों को बनाने वाले भाण्ड, धूर्त्त, निशाचर हैं, वेदों में माँस खाना लिखा है, वेदों में पण्डितों के धूर्त्ततायुक्त वचन हैं इत्यादि के लिए महर्षि दयानन्द चार्वाक आदि की अपेक्षा वेदों की भ्रष्ट अनर्थकारी व्याख्याएँ करने वाले वाममार्गियों आदि को ही अधिक उत्तरदायी मानते हैं। महर्षि के इस विचार में सच्चाई भी है क्योंकि अगर उस युग में वेदों का सत्यार्थ प्रचलित रहा होता तो सम्भवतः ये चार्वाक आदि नास्तिक मतों का जन्म ही न होता और न ही ये चार्वाक आदि वेदों के निन्दा अभियान में स्वयं को प्रवृत्त करते।

इन्हीं कारणों से महर्षि ने वेदों के सत्यार्थ प्रकाशन को स्व–जीवन के प्रमुख कार्य के रूप में स्थान दिया और अपने द्वारा स्थापित आर्य समाज से भी यही अपेक्षा रखी कि उसके सदस्य वेदों के पढ़ने–पढ़ाने और सुनने–सुनाने को ही अपना 'परम धर्म' मानकर वेदों के सत्यार्थ की ज्योति को सदैव प्रज्वलित रखेंगे।

8–17 टाऊनशिप, पो. नर्मदानगर, जि. भरूच, गुजरात–392015, मो. 9879528247

☞ पृष्ठ 03 का शेष

भगवान शंकर ...

तब तुम्हें कुछ करना नहीं होगा। सब–कुछ स्वयं हो जायेगा। कबीर की भाँति तुम भी कह सकोगे–

कबीरा मन निर्मल भया जैसे गंगा नीर।
पाछे–पाछे हरि फिरें कहत कबीर कबीर ।।

मन शान्त हो जायेगा, उस समय शम की वह सम्पत्ति प्राप्त हो जायेगी, जिसे षट् सम्पत्ति में सबसे प्रथम स्थान दिया गया है।

'शम' के पश्चात् दूसरी सम्पत्ति है 'दम' अर्थात् इन्द्रियों का दमन, उन्हें वश में रखना। इन्द्रियाँ हैं दो प्रकार की। एक वे जो बाहर का ज्ञान हमारे पास लाती हैं, दूसरी वे जिनसे हम कर्म करते हैं। ज्ञान लानेवाली इन्द्रियाँ कहती हैं, अमुक वस्तु का स्वाद बहुत उत्तम है, अमुक वस्तु बहुत सुन्दर है, अमुक शब्द मन को मोहनेवाला है। कर्म करनेवाली इन्द्रियाँ कहती हैं, हम उन्हें लेंगी। दोनों अपना–अपना व्यापार चलाती रहती हैं। मन उनका और आत्मा मन का दास बन जाता है– उस स्वामी के समान जो रथ में सवार हो, रथ का सारथि घोड़ों के वश में हो, और घोड़े आवारा हों। इन घोड़ों को, इन इन्द्रियों को वश में रखना चाहिये। किस प्रकार यह हो सकता है, इसके सम्बन्ध में एक कथा सुनिये। स्वामी रामतीर्थ जब प्रोफैसर तीर्थराम थे, तब लाहौर के एक कॉलेज में पढ़ाते थे। रहते थे लुहारी दरवाज़े में । कॉलेज से घर को आ रहे थे, तो लुहारी दरवाज़े में उन्होंने एक व्यक्ति को टोकरी में रखकर नींबू बेचते हुए देखा। पीले रंग के रस भरे नींबू थे वे। मुख में पानी आ गया। जिह्वा ने कहा, 'क्रय कर लो, उनका स्वाद बहुत उत्तम है' तीर्थराम थोड़ी देर रुके, फिर आगे बढ़ गये। आगे जाकर जिह्वा फिर मचली। उसने कहा, 'नींबू अच्छे तो थे, नींबू खाने में हानि क्या है?' तीर्थराम उल्टे आये। नींबुओं को देखा, वास्तव में बहुत उत्तम थे। उन्हें देखकर फिर घर की ओर चल पड़े। थोड़ी दूर गये तो जिह्वा फिर चिल्ला उठी, 'नींबू का रस तो बहुत अच्छा है, नींबू तो खाने की चीज़ है, उसे खाने में पाप क्या है?' तीर्थराम पुनः नींबूवाले के पास आये। दो नींबू मोल ले लिये। घर पहुँच देवी से कहा, 'चाकू लाओ।' उसने चाकू लाकर रख दिया। तीर्थराम चाकू को नींबू के पास और दोनों को अपने समक्ष रखकर बैठ गये। बैठे रहे, देखते रहे। अन्दर से आवाज़ आई, 'इन्हें काटो, काटने में क्या हानि है!' रामतीर्थ ने चाकू उठाया और एक नींबू को काट दिया। मुख में पानी भर आया। अन्दर से फिर प्रेरणा हुई, 'इसे चखकर तो देखो, इनका रस बहुत उत्तम है।' रामतीर्थ ने एक टुकड़े को उठा लिया, जिह्वा के समीप ले गये, नींबू को उसके साथ लगने नहीं दिया। अन्दर से किसी ने पुकारकर कहा, 'तू क्या इस जिह्वा का दास है, जो यह जिह्वा कहेगी वही करेगा? जिह्वा तेरी है, तू जिह्वा का नहीं।' समक्ष खड़ी पत्नी ने कहा, 'यह क्या करते हो? नींबू को लाये, इसे काटा, अब खाते क्यों नहीं?' जिह्वा ने कहा, 'शीघ्रता करो, नींबू का स्वाद बहुत उत्तम है' रामतीर्थ शीघ्रता से उठे, कटे हुए और बिना कटे दोनों नींबुओं को उठाकर गली में

शेष पृष्ठ 07 पर ☞

पं. भगवद्दत्त रिसर्च स्कॉलर

● डॉ. भवानी लाल भारतीय

आर्यसमाज के सारस्वत संसार में वैज्ञानिक शैली का शोधकार्य आरम्भ करने तथा उसे परवान पर चढ़ाने का श्रेय पं. भगवद्दत्त को है। यों तो वे साधारण बी.ए. ही थे, किन्तु विभिन्न क्षेत्रों में किये गये उनके लेखन और शोधकार्य पर सैकड़ों पी–एच.डी. विद्वानों के कार्यों को न्यौछावर किया जा सकता है। पं. भगवद्दत्त का जन्म अमृतसर (पंजाब) में 27 अक्टूबर 1893 को श्री चंदनलाल तथा माता हरदेवी के यहाँ हुआ था। उन्होंने 1913 में लाहौर से बी.ए. किया और अपना जीवन वेदाध्ययन तथा वैदिक शोध को समर्पित कर दिया। पं. भगवद्दत्त अपना योग गुरु स्वामी लक्ष्मणाानन्द को मानते थे, जिन्होंने योग का प्रशिक्षण ऋषि दयानन्द से प्राप्त किया था। डी.ए.वी कॉलेज लाहौर से बी.ए.करने के पश्चात् भगवद्दत्त इसी कॉलेज में आरम्भ किये गये शोध विभाग में काम करने लगे। 1921 में महात्मा हंसराज के आदेश से वे वैदिक शोध विभाग के अध्यक्ष बने और 1934 तक कार्य किया। इस अवधि में उन्होंने इस शोध विभाग को उत्तर भारत का प्रमुखा प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान बना दिया। संस्कृत हस्तलेखों का संग्रह किया गया। 1947 तक यहाँ के ग्रन्थों की संख्या सात हजार तक पहुँच गई थी। इस अवधि में शोध विभाग से उनके तथा अन्य विद्वानों द्वारा किया गया शोधपूर्ण कार्य श्रीमद्दयानन्द महाविधालय संस्कृत ग्रन्थमाला के अन्तर्गत छपता रहा।

कतिपय विवादस्पद व्यक्तियों के हस्तक्षेप के कारण पं. भगवद्दत्त को 1 जून 1934 को डी.ए.वी. कॉलेज की सेवा से मुक्त होना पड़ा। अब वे स्वतन्त्र रीति से शोध एवं लेखन में लगे। देश विभाजन के पश्चात् दिल्ली उनका कार्य क्षेत्र बन गया। यहाँ पंजाबी बाग में उनका निवास रहा और 'इतिहास प्रकाशन मण्डल', नाम के प्रकाशन संस्थान के द्वारा वे अपने शोध तथा लेखन कार्य का प्रकाशन करते रहे। पं. भगवद्दत्त का प्राच्य विद्याओं के विद्वन्मण्डल में सदा आदर रहा। देश और विदेश के विख्यात प्राच्य विद्याविद् उनके सम्पर्क में रहे तथा उनके शोध कार्य को सम्मान देते रहे। ऋषि दयानन्द की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा के वे मृत्युपर्यन्त सदस्य रहे तथा सभा के प्रकाशन कार्यों में सभा के अधिकारियों का मार्गदर्शन करते रहो। 22 नवम्बर 1968 को उनका दिल्ली में निधन हो गया। उनके पुत्र पं. सत्यश्रवा ने उनके निधन के उपरान्त प्रणव प्रकाशन के माध्यम से अपने यशस्वी पिता के ग्रन्थों का प्रकाशन पर्याप्त काल तक जारी रखा।

मेरे निजी संस्मरण – पं. भगवद्दत्त के दर्शन करने का लाभ मुझे तीन बार मिला, जब कि समीप बैठकर विचार परिवर्तन के मौके दो बार आये। 1951 में आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान के अलवर अधिवेशन में भाग लेकर मैं आर्य कुमार परिषद् के परीक्षा मन्त्री डॉ. सूर्यदेव शर्मा के साथ भ्रमणार्थ प्रथम बार दिल्ली आया और पुरानी दिल्ली स्टेशन के निकट के आर्यसमाज नयाबाँस में ठहरा। जब रविवार आया तो डॉ. सूर्यदेवजी के साथ आर्यसमाज दीवानहाल के साप्ताहिक सत्संग में शामिल हुआ। यहाँ वक्ता के रूप में पं. भगवद्दत्त मञ्चासीन थे। यों पं. भगवद्दत्त के विश्रुत ग्रन्थ **'वैदिक वापाङ्मय का इतिहास'** (प्रथम भाग) को मैं आर्यसमाज गुलाब सागर जोधपुर के पुस्तकालय से लेकर पढ़ चुका था तथा तथा लेखक की ऐतिहासिक शोध की विधि से परिचित था, किन्तु इस विख्यात वेदज्ञ को प्रत्यक्ष देखने का यह प्रथम अवसर था। उस दिन का भगवद्दत्तजी का प्रवचन मनुस्मृति पर आधारित था। मनु प्रोक्त धर्म शास्त्र का वैसा मौलिक एवं तात्त्विक विवेचन मैंने अपने जीवन में अन्यत्र नहीं सुना। जहाँ तक याद है, उसी प्रवचन में जब वक्ता ने महाभारत में आये धृतराष्ट्र के **'तदा नाशंसे विजयाय संजय'** वाली पुनरुक्ति के श्लोकों को प्रस्तुत किया तो महाभारतकार व्यास की काव्य प्रतिभा का चमत्कारिक परिचय भी मिला।

दस वर्ष बाद 1961 में दिल्ली में नवम् आर्य महासम्मेलन के अवसर पर पं. भगवद्दत्तजी से प्रत्यक्ष भेंट तथा विस्तृत विचार–विमर्श का अलभ्य अवसर मिला। इस सम्मेलन में एक कार्यक्रम विशिष्ट आर्यों के सम्मेलन (गोष्ठी) का भी था। आर्यसमाज के तत्कालीन विशिष्ट नेता, उपदेशक तथा विद्वान् इसमें आमन्त्रित थे। मुझे भी इसमें प्रतिनिधित्व प्राप्त था। यहाँ श्री जगदीश विद्यार्थी (सम्प्रति स्वामी जगदीश्वरानन्द) से भेंट हुई तो हमने निश्चय किया कि पं. भगवद्दत्तजी से समय लेकर उनके पटेल नगर स्थित निवास पर विस्तृत भेंट की जाये। तदनुसार पटेल नगर में जब पण्डितजी से मिलना हुआ तो उन्होंने अपनी पत्नी पं. सत्यवती शास्त्री से मेरा परिचय राजस्थान के युवा वैदिक विद्वान् के रूप में कराया। तब तक पं. ब्रह्मदत्त जिज्ञासु द्वारा सम्पादित वेदवाणी में मेरे कई लेख छप चुके थे। इस प्रसंग में पण्डितजी ने बताया कि उनकी पत्नी पंजाब की प्रथम महिला हैं, जिन्होंने शास्त्री परीक्षा उत्तीर्ण की है। वे पंजाब में संस्कृत की प्राध्यापिका रही थीं। पं. भगवद्दत्त के साथ वार्त्तालाप में अनेक रोचक प्रसंग आये। उन्होंने बताया कि उन्होंने जो वैदिक शोध का कार्य किया है, उसका माध्यम हिन्दी है। पाश्चात्य विद्वानों ने जब मेरे शोध की महत्ता तथा गुरुता को अनुभव किया तो उनके लिए हिन्दी सीखना इसलिए अनिवार्य हो गया, क्योंकि मेरे ग्रन्थ हिन्दी में हैं, जिनका अनुशीलन उनके लिए अपरिहार्य हो गया था।

पण्डितजी ने अपने पूना प्रवास के रोचक संस्करण भी सुनाये। पंजाबी पगड़ी, खुले गले के सूती कोट तथा तंग पैजामे में जब पं. भगवद्दत्त का पुण्य पत्तन (पुणे) के संस्कृतज्ञ पण्डितों से साक्षात्कार हुआ और जब उन्होंने धारा प्रवाह संस्कृत में इन महाराष्ट्रीय विद्वानों से सम्भाषण किया तो वे लोग चकित हो गये। पंजाब वेशभूषावाले पं. भगवद्दत्त उन्हें प्रथम दृष्ट्या लाहौर से आया कोई व्यापारी (लाला) जान पड़ा, किन्तु अस्खलित वाणी में देववाणी के प्रयोग को सुनकर ये मराठा पण्डित दंग रह गये। तथापि पण्डितजी की विनम्रता का क्या कहना? मुझसे कहने लगे– **'पं. जी, मै तो वेदोदधि के किनारे (खड़ा) एक ऐसा जिज्ञासु हूँ, जिसने अभी केवल कंकरों को बीनने में ही श्रम किया है। वेदवारिधि के तले में विद्यमान मुक्ता मणियों को प्राप्त करना तो अभी शेष है।'** उनकी इस उक्ति से **'विद्या विनये न शोभते'** की उक्ति की सत्यता सिद्ध हुई।

पं. भगवद्दत्त ने जहाँ वैदिक साहित्य के तब तक अप्राप्त अनेक दुर्लभ ग्रन्थों की खोज की थी, वहाँ **उन्होंने पाश्चात्यों की वेद के अर्थ करने की पद्धति का भी खण्डन किया था, जो मुख्यतः ईसाई–यहूदी पक्षपात को लेकर चलती है तथा ब्राह्मण–निरुक्त आदि प्राचीन ग्रन्थों से सहायता लेने की अपेक्षा तुलनात्मक भाषा विज्ञान, देवगाथावाद तथा चार्ल्स डार्विन प्रवर्त्तित विकासवाद से प्रेरित होती है।** पाश्चात्य विद्वानों के इन पूर्वाग्रह विचारों को उन्होंने अपनी एक पुस्तक में स्पष्ट किया, जिसका शीर्षक है– Western Indologists : A study in motives। इसकी एक प्रति उन्होंने मुझे भेंट की, जिसमें अनेक उदाहरण देकर पश्चिमी विद्वानों के भारतीय वैदिक साहित्य विषयक पक्षपातपूर्ण विचारों को उद्धृत किया गया है।

1966 में पं. भगवद्दत्तजी से मेरी भेंट अजमेर में उस समय हुई जब वे आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान की हीरक जयन्ती में भाग लेने आये। इस अवसर पर राजस्थान के तत्कालीन राज्यपाल डॉ. सम्पूर्णानन्द की अध्यक्षता में जो वेद सम्मेलन रखा गया था, उसमें पं. भगवद्दत्तजी को प्रमुख वक्ता के रूप में बोलना था। वे तथा प्रसिद्ध दार्शनिक विद्वान् पं. उदयवीर शास्त्री अजमेर में तब रह रहे पं. युधिष्ठिर मीमांसकजी के निवास (अलवर गेट) पर ठहरे थे। इन दोनों विद्वानों के वहाँ निवास को मीमांसकजी ने **'घर बैठे गंगा आना'** बताया था। इसी वर्ष मैंने अपनी पी एच.डी. परीक्षा के लिए तैयार शोध प्रबन्ध को अन्तिम रूप देकर उपाधि हेतु प्रस्तुत करने का निश्चय किया था। अनुकूल अवसर देख कर मैंने शोध प्रबन्ध की प्रथम प्रति को पं. भगवद्दत्तजी तथा पं. उदयवीर शास्त्रीजी को दिखाया तथा उनके विचारों एवं सुझावों को यथास्थान नियोजित किया। संयोग ऐसा रहा कि 1968 में मेरा यह शोध प्रबन्ध (**ऋषि दयानन्द और आर्यसमाज की संस्कृत भाषा और साहित्य को देन**) राजस्थान विश्वविद्यालय से डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी की उपाधि के लिए स्वीकृत हुआ और उसी वर्ष पं. भगवद्दत्त का निधन हो गया। जब रामलाल कपूर ट्रस्ट ने मेरे शोध ग्रन्थ को प्रकाशित करने का निश्चय किया तो मैंने इस ग्रन्थ का समर्पण पं. भगवद्दत्तजी का पावन स्मृति में किया। यह एक संयोग ही था कि 1966 में उनके अजमेर आगमन के समय उनके साथ मेरा एक चित्र शिवगंज के फोटोग्राफर भीष्मदेवजी ने ले लिया था। इस युग्म चित्र को मैंने अपने शोध प्रबन्ध में दिया जो स्वर्गीय पण्डितजी की याद को ताजा करता है। 1961 में हिन्दुस्तान दैनिक के एक स्तम्भ **'व्यक्ति, साहित्य और समस्याएँ'** के अन्तर्गत मैंने पं. भगवद्दत्तजी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व का परिचय देते हुए एक लेख छपाया था। महापण्डित राहुल सांकृत्यायन से पं. भगवद्दत्त की भेंट लाहौर में उस समय हुई थी जब राहुलजी आर्य मुसाफिर विद्यालय आगरा से अपना अध्ययन समाप्त कर उच्चतर शास्त्रीय अध्ययन के लिए लाहौर आये थे। जब राहुलजी (तब राम उदारदास) ने उनके सामने अपना विचार रखा कि **वे ऋषि दयानन्द के एक–एक शब्द तथा वाक्य को पूर्ण सत्य मानते हैं तो पं. भगवद्दत्त ने उन्हें विवेकपूर्ण सलाह देते हुए कहा था कि जब तक वे ऋषि दयानन्द के सभी ग्रन्थों का सम्यक् अवगाहन न कर लें तब तक मात्र भावुकतापूर्ण कथन उचित नहीं है।**

पं. भगवद्दत्त का व्यापक लेखन

पं. भगवद्दत्त के अध्ययन तथा लेखन का क्षेत्र बहुत व्यापक था। वैदिक साहित्य, इतिहास–पुराण, पुरातत्त्व, भाषा–विज्ञान आदि विविध विषय उनके अध्ययन तथा लेखन की परिधि में आये। जब उन्होंने डी.ए.वी. कॉलेज लाहौर के शोध विभाग का काम संभाला तो उनकी सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कृति **'वैदिक वाङ्मय का इतिहास'** तीन खण्डों में प्रकाशित हुई। प्रथम खण्ड में वेदों की शाखाओं का इतिहास निबद्ध किया गया है। उस समय तक उपलब्ध विभिन्न वैदिक शाखाओं का पूर्ण विवरण उसमें दिया गया था। द्वितीय खण्ड में ब्राह्मण तथा आरण्यक ग्रन्थों का विवेचन है, जब कि तृतीय खण्ड में आरम्भ से लेकर दयानन्द

सरस्वती पर्यन्त वेदभाष्यकारों तथा उनके द्वारा रचित भेदभाष्यों का विवरण दिया गया है। प्रथम खण्ड का एक संशोधित संस्करण देश विभाजन के पश्चात् रामलाल कपूर ट्रस्ट ने प्रकाशित किया। इसमें वेदों के अपौरुषेयत्व के साथ–साथ भाषा की उत्पत्ति पर विशेष सामग्री सम्मिलित की गई। ध्यान रहे कि पं. भगवद्दत्त ने भाषा की उत्पत्ति को लेकर पाश्चात्य विद्वानों की धारणाओं का सोपपत्तिक खण्डन कर भाषा की दैवी उत्पत्ति के भारतीय मत को प्रतिष्ठापित किया था। पाश्चात्यों के एतद्विषयक मतों के खण्डन में उनकी युक्तियाँ अकाट्य थीं।

वेद विषयक उनके अन्य ग्रन्थ –

1. ऋग्वेद पर व्याख्यान – 1920 में छपी उनकी यह आरम्भिक शोध कृति है। इसमें मन्त्रों के ऋषियों पर प्रामाणिक सामग्री देकर स्वामी दयानन्द के इस मत को पुष्ट किया गया है कि वैदिक ऋषि मन्त्रों के रचयिता नहीं, अपितु द्रष्टा हैं। यहाँ द्रष्टा तथा कर्ता के भेद को स्पष्ट किया गया है।

2. ऋङ्मन्त्र व्याख्या – ऋषि दयानन्द ने वेदभाष्य ने भिन्न अपने अन्य ग्रन्थों में जिन वेद मन्त्रों को प्रसंगोपात्त उद्धृत किया है, उनकी सार्थ समीक्षा की गई है। इस दृष्टि से इस ग्रन्थ की विशिष्टता है।

3 वेद विद्या निदर्शन – वेदों में निहित प्राकृतिक और भौतिक सत्यों का उद्घाटन करनेवाला यह शोध ग्रन्थ पण्डितजी की परवर्ती रचना है। इसमें वेदों विवेचित वैज्ञानिक तथ्यों की प्रामाणिक जानकारी प्रस्तुत की गई है।

सम्पादित ग्रन्थ

'अथर्ववेदीय पञ्च पटलिका' तथा 'अथर्ववेदीय माण्डूकी शिक्षा' पं. भगवद्दत्त के द्वारा सम्पादित ग्रन्थ हैं। उन्होंने निरुक्त का विशद भाष्य लिख कर पाश्चात्य विद्वानों द्वारा निरुक्त की गई अलीक आलोचना का खण्डन किया। पण्डितजी ने वाल्मीकीय रामायण के बाल, अयोध्या तथा अरण्य काण्डों के पश्चिमोत्तर कश्मीरी पाठ का सम्पादन किया जो दयानन्द महाविद्यालय (शोध) ग्रन्थमाला के 7वें खण्ड में छपा। पण्डितजी का विचार वेदांगों का विस्तृत इतिहास लिखने का था। कल्पसूत्रों के सम्बन्ध में उन्होंने सारी सामग्री संचित कर ली थी, किन्तु यह कार्य आगे नहीं बढ़ सका। चारायणीय शाखा मन्त्रार्षाध्याय, आथर्वण ज्योतिष, धनुर्वेद का इतिहास, आचार्य बृहस्पति के राजनीतिपरक सूत्रों की भूमिका आदि उनके अन्य शोध ग्रन्थ हैं। आर्य महासम्मेलन मेरठ में उन्होंने आर्य राजनीति पर जो भाषण दिया, उसमें राजनीति एवं प्रशासन विषयक प्राचीन संस्कृत ग्रन्थों का विस्तारपूर्वक उल्लेख था जो यह बताने के लिए पर्याप्त था कि पुराकाल में इस विषय पर हमारे यहाँ प्रचुर सामग्री विद्यमान थी।

पं भगवद्दत्त का इतिहास ज्ञान

पं. भगवद्दत्त ने भारतीय इतिहास का अनुशीलन भारतीय दृष्टि से किया था। वे पाश्चात्य विद्वानों तथा उनके मुखापेक्षी भारतीय इतिहासज्ञों की इस धारणा से असहमत थे कि भारत के इतिहास का आरम्भ गौतम बुद्ध से माना जाना चाहिए तथा उनसे पुराने ग्रन्थों में उल्लिखित व्यक्तियों और घटनाओं को प्रागैतिहासिक (Pre-Historic) की कोटि का समझना चाहिए। इसके विपरीत उन्होंने पार्जिटर की भाँति पुराणों में आई राजाओं की वंशावलियों का निरीक्षण–परीक्षण कर अत्यन्त प्राचीन आर्य इतिहास के लुप्त सूत्रों को व्यवस्थित किया। उनके द्वारा लिखित **भारतवर्ष का बृहद् इतिहास** एतद्विषयक प्रामाणिक तथ्यों को प्रस्तुत करता है। यह ग्रन्थ दो खण्डों में लिखा गया है। सूर्य वंश, चन्द्र वंश तथा यदु वंश के राजाओं का प्रामाणिक विवरण इसमें दिया गया है।

ऋषि दयानन्द विषयक अन्वेषण कार्य

स्वमी दयानन्द के पत्रों और विज्ञापनों का सम्पादन पं. भगवद्दत्त का एक ऐतिहासिक, स्मरणीय कार्य है। उनसे पहले महाशय मुन्शीराम जिज्ञासु (स्वामी श्रद्धानन्द) ने 1910 में ऋषि दयानन्द को भेजे गये पत्रों के संकलन को प्रकाशित किया था। तत्पश्चात् खतौली के जमींदार श्री मामराजसिंह ने अपने अपूर्व श्रम तथा लगन से जब ऋषि दयानन्द द्वारा लिखित तथा उन्हें प्रेषित पत्रों का अपूर्व संग्रह कर डाला तो उसे सम्पादित करने का श्रम साध्य कार्य पं. भगवद्दत्त ने किया। उन्होंने ऋषि दयानन्द की स्वलिखित (थियोसोफिस्ट के 3 अंकों में छपी तथा स्वकथित पूना प्रवचनों के क्रम में 4 अगस्त 1875 को सुनाई गई) आत्मकथा का समन्वित सम्पादन एवं प्रकाशन किया है। सत्यार्थप्रकाश का उनके द्वारा सम्पादित संस्करण गोविन्दराम हासानन्द द्वारा 1963 में प्रकाशित हुआ है। इसमें हस्तलेखों के मिलान का अतिरिक्त श्रम देखा जा सकता है।

पं. भगवद्दत्त का हिन्दी तथा अंग्रेजी दोनों भाषाओं पर समान अधिकार था। तथापि उन्होंने हिन्दी को भारत की प्रमुख भाषा होने के कारण अपनी ग्रन्थ रचना इसी भाषा में की। पं. गुरुदत्त की अंग्रेजी रचनाओं का हिन्दी अनुवाद उन्होंने पं. सन्तराम बी.ए. के सहयोग से किया। उनका अन्तिम ग्रन्थ The Story of Creation उनके निधन के पश्चात् छपा। पण्डितजी के पुत्र पं. सत्यश्रवा उत्तर प्रदेश के पुरातत्त्व विभाग की सेवा में थे। वहाँ से अवकाश लेने के पश्चात् उन्होंने अपने यशस्वी पिता की कुछ कृतियों को प्रणव प्रकाशन के द्वारा प्रकाशित कराया। वैदिक वाङ्मय के इतिहास के तीनों खण्ड 1974, 1976 तथा 1978 में क्रमशः प्रकाशित हुए। इनका सम्पादन पं. सत्यश्रवा ने किया था। जब मैं अजमेर में था, एक बार पं. सत्यश्रवा सपत्नीक मुझसे भेंट करने वहाँ आये तथा पं. भगवद्दत्तजी के ग्रन्थों के विषय में परामर्श किया। निश्चय ही आर्यसमाज के कुछ विद्वानों को छोड़कर वेदों पर लिखने वाले अन्य लेखकों ने पं. भगवद्दत्त द्वारा निर्दिष्ट वैज्ञानिक शोधपूर्ण लेखन की प्रणाली को स्वीकार नहीं किया। विश्वविद्यालयों में किये गये शोध कार्यों में तो इस प्रणाली का स्वीकार किया जाना अनिवार्य ही था।

आर्य समाज के प्राज्ञ पुरुष से साभार

☞ पृष्ठ 05 का शेष

भगवान शंकर ...

फेंक दिया, प्रसन्नता से नाच उठे, "मैं जीत गया!'

यह है इन्द्रियों को वश में करने की विधि! इनकी नहीं, इनके पीछे बैठे हुए आत्मा की, आत्मा के अन्दर बैठे हुए ईश्वर की प्रेरणा सुनो। महर्षि दयानन्द 'सत्यार्थप्रकाश' के नवें समुल्लास में कहते हैं, 'जब इन्द्रियाँ अर्थों में, मन इन्द्रियों और आत्मा के साथ संयुक्त होकर प्राणों को प्रेरणा करके अच्छे या बुरे कर्मों में लगता है, तभी बहिर्मुख हो जाता है। इसी समय भीतर से आनन्द, उत्साह, निर्भयता और बुरे कर्मों में भय, शंका एवं लज्जा उत्पन्न होती है। वह अन्तर्यामी परमात्मा की शिक्षा है। जो कोई इस शिक्षा के अनुकूल वर्तता है, वही मुक्ति जैसा सुख प्राप्त करता है।' इसी प्रकार महर्षि 'सत्यार्थ प्रकाश' के सातवें समुल्लास में यह बतलाते हैं, "जब आत्मा और मन इन्द्रियों को किसी विषय में लगाता या चोरी आदि बुरी या परोपकार आदि अच्छी बात करने का जिस क्षण में आरम्भ करता है, उसी समय जीव की इच्छा, ज्ञान आदि उसी इच्छित विषय पर झुक जाती हैं। उसी क्षण में आत्मा के अन्दर से बुरे काम करने में भय, शंका और लज्जा तथा अच्छे कामों के करने में अभय, निःशंकता और आनन्द–उत्साह उठता है। वह जीवात्मा की ओर से नहीं, किन्तु परमात्मा की ओर से है।" यह है सरल और सीधी विधि–अन्दर की ध्वनि सुनाई देती है प्रत्येक समय। नहीं सुनाई देती उन व्यक्तियों को जिन्होंने बाहर इतना कोलाहल मचा रखा है कि अन्दर की ध्वनि दबकर रह गई है। कमरे में घड़ी लगी हुई है। उसकी टक–टक भी होती है, परन्तु बाहर यदि बाजे बज रहे हों तो ? कोलाहल बन्द करो, अन्दर की ध्वनि आयेगी अवश्य–

अन्दर के पट तब खुलें, जब बाहर के पट देय।

बाहर की इन्द्रियों को वश में करो, अन्दर से ध्वनि आयेगी। ईश्वर की प्रेरणा सुनाई देगी। आँखें कहेंगी, अमुक सिनेमा बहुत अच्छा है, चलो देखें। मन प्रसन्न होगा। परन्तु आप कहेंगे, "आँखें तो मेरी सेविका हैं, मैं आँख का दास नहीं। मुझे उल्टे मार्ग पर न ले जा।" इसी प्रकार प्रत्येक इन्द्रिय को वश में करने का प्रयत्न करो। ऐसा करने से वह सम्पत्ति प्राप्त होगी जिसे 'दम' कहते हैं।

'दम' के पश्चात् तीसरी सम्पत्ति है – 'तितिक्षा'–सहन करने की शक्ति। शोक हो या रोग, दुःख हो या क्लेश, संकट हो या आपत्ति, सबको सहन करते हुए अपने लक्ष्य की ओर बढ़ते जाना। इसके लिए शरीर को शक्तिशाली बनाना चाहिये, ऐसा बनाना चाहिये कि वह गर्मी–सर्दी, आपत्ति–विपत्ति सबका साम्मुख्य कर सके। मन की दशा ऐसी होनी चाहिए कि सुख हो या दुःख, जो लक्ष्य अपने समक्ष रखा है उसे प्राप्त किये बिना पीछे न हटना पड़े। शरीर के लिए चरक ने कहा है, जिसके अन्दर तीनों दोष सम अवस्था में रहते हैं, दोनों प्रकार की अग्नि सम रहती है, जिसके अन्दर धातु और मल ठीक रूप से कार्य करते हैं और जिसका आत्मा, इन्द्रिय और मन प्रसन्न है वह स्वस्थ है। दोष हैं– कफ, वात और पित्त; तीनों सम रहें तो मनुष्य ठीक रहता है। अग्नि दो प्रकार की है– जठराग्नि और रक्ताग्नि। दोनों में से कोई भी बढ़ जाये तब रोग आते हैं। धातु है लोहा आदि। रक्त के अन्दर उनका परिमाण ठीक रहे तो कार्य चलता है, नहीं तो ठप्प होकर बैठ जाता है। यह पहचान इस बात की है कि आपका शरीर 'तितिक्षा' की दशा में है या नहीं।

'तितिक्षा' के पश्चात् चौथी सम्पत्ति का नाम है– 'उपरति'। इसका अर्थ है दुष्ट व्यक्तियों के संग से बचना। दुष्ट को सुधारने का प्रयत्न करना अवश्य। यदि वह सुधर नहीं पाता तो उससे परे हट जाना, उसके संग को त्याग देना। संगत अच्छी हो तो अच्छे परिणाम निकलते हैं, अच्छी न हो तो बुरे परिणाम समक्ष आते हैं।

'उपरति' के पश्चात् पाँचवीं सम्पत्ति है 'श्रद्धा', जिसके बिना कोई कार्य नहीं बनता। यदि तुम्हें पथ–प्रदर्शक की आवश्यकता है तो पहले किसी व्यक्ति को अच्छी प्रकार जाँचकर देख लो। पूछताछ करो उसके सम्बन्ध में, और जब ज्ञात हो जाये कि वह पथ–प्रदर्शन करने योग्य है, तब उस पर पूरे विश्वास के साथ श्रद्धा करके, जो कुछ कहता है, उसे करते चले जाओ। श्रद्धा नहीं होगी तो ध्यान रखो, ठीक मार्ग दिखानेवाला भी तुम्हारे लिए कुछ नहीं कर पायेगा। श्रीकृष्ण गीता में कहते हैं, 'श्रद्धा से ज्ञान मिलता है, ज्ञान से शान्ति।' वेद भगवान् भी कहता है–

''श्रद्धा से अग्नि जलती है, श्रद्धा से हवि होमी जाती है। हम यह घोषणा करते हैं कि श्रद्धा ऐश्वर्य और सुख की चोटी पर रहती है।''

(ऋ. 10.151.1.

और 'श्रद्धा' के पश्चात् छठी सम्पत्ति है 'समाधान'– मन को बाहर की ओर से हटाकर अन्दर की ओर एकाग्र कर देना। यह है 'षट् सम्पत्ति'। परन्तु इसके बारे में अभी कुछ और भी बातें कहनी हैं। आज समय हो गया है समाप्त, आगे चौथे भाषण में कहूँगा।

ओ३म् शम्!

ज़ेल जाने का मज़ा

● डॉ. सुरेन्द्र कुमार शर्मा

हाँ, मेरा अनुमान सच निकला। मुझे उम्मीद थी कि पहले आप इसी आलेख को पढ़ेंगे। शीर्षक था ही ऐसा! लोग तो बचना चाहते हैं ज़ेल जाने से, इसके लिए उन्हें चाहे पुलिस को रिश्वत देनी पड़े, मुकद्दमा लड़ना पड़े या कोई वकील करना पड़े। पर मैं तो ज़ेल जाने में मज़े ढूँढ़ रहा हूँ और वह भी अनुभव के आधार पर। अपनी–अपनी रुचि है, अपनी–अपनी सोच है।

आइये, मूल विषय पर आता हूँ। कल्पना कीजिए, आप डॉक्टर हैं और आपको मरीज़ नहीं मिलते थे पर अचानक इतने अधिक मरीज मिल गए कि आपसे संभाले भी नहीं गए। आपकी खुशी का ठिकाना ही न रहा। एक उदाहरण और, आप अध्यापक हैं, रिटायर्ड हो चुके हैं पर पढ़ाने की प्रबल इच्छा बनी हुई है। और एक दिन आपकी किस्मत बदली और आपको इतने अधिक विद्यार्थी मिल गए कि आप गिनती भी न कर सकें। भगवान ने दिया तो छप्पड़ फाड़ कर, क्या कहेंगे आप इसे?

मैं ही वह अध्यापक या प्राध्यापक हूँ। रिटायर्ड हुआ लेकिन पढ़ाने की तमन्ना न मिटी। कभी किसी स्कूल में गया तो कभी किसी कॉलेज में, 30–40 स्कूल–कॉलेजों में भटकने के बाद भी तृप्ति न हुई। बस इसी धुन में एक दिन घुस गया ज़ेल में। मैं इतना अवश्य कहना चाहता हूँ कि बिना किसी अपराध के ज़ेल में घुसना बहुत कठिन काम है। यह अलग कहानी है कि मुझे ज़ेल में घुसने में सफलता कैसे मिली? मैं इसे ईश्वर की कृपा और कारागार अधिकारियों की उदारता ही कहूँगा। खैर, मुझे ज़ेल जाने का शुभावसर मिला। ज़ेल क्या गया, मेरी तो पौ–बारह हो गई। खुशी का ठिकाना ही न रहा। चारों तरफ बंदियों के रूप में विद्यार्थी ही विद्यार्थी। वे बन्दी चाहे कुछ भी हों, लेकिन मैं अध्यापक था, इसलिए उनमें विद्यार्थियों की ही झलक देख रहा था। कोई 18 साल का विद्यार्थी तो कोई 70–80 साल का। किशोर, युवा, वृद्ध सभी विद्यार्थी। क, ख, ग पढ़ने वाले, ए.बी.सी.डी. रटने वाले, कबीर, सूर, तुलसी के दोहों को दुहराने वाले, गीता को गुनगुनाने वाले, वेद मंत्रों का उच्चारण करने वाले, संध्या, हवन, भजन में तल्लीन रहने वाले और विभिन्न परीक्षाओं में सम्मिलित होने वाले। मैं तो बल्लियों उछल पड़ा। मन ने कहा, पढ़ा, जितना पढ़ा सकता है। हिन्दी पढ़ा, संस्कृत पढ़ा, नैतिक शिक्षा सिखा, सभ्यता का ज्ञान दे, संस्कृति का संदेश दे, मंत्र का अर्थ बता, यज्ञ का अभिप्राय समझा, किसने रोका है तुझे? यही तो हैं ज़ेल में आने के मज़े।

यदि आप में तड़प है, छटपटाहट है, कुछ करना चाहते हैं, समाज के लिए, देश के लिए तो समर्पित कर दीजिए, स्वयं को ज़ेल के लिए। पर मन में स्वार्थ की भावना न हो, महत्त्वाकांक्षा न हो, आत्मश्लाघा का भाव न हो। सभी कार्य और सभी सेवायें निःस्वार्थ और निःशुल्क हों। यदि कुछ अपनी जेब से भी लगाना पड़े तो उसे भी भगवान का प्रसाद मान लीजिए। यदि आप में ऐसा करने का सामर्थ्य है तो समझ लीजिए, कारागार आपके लिए पलक–पाँवड़े बिछाये खड़ा है।

पर याद रखिये, कारागार स्कूल नहीं है, कारागार को स्कूल बनाना पड़ता है बहुत मेहनत करके, छोटे–बड़े बंदी विद्यार्थी नहीं हैं, उन्हें विद्यार्थी बनाना पड़ता है, समझा–बुझाकर, विवेक पूर्वक। निर्दय, कठोर, अशिक्षित कैदी भक्त या साधक नहीं, उन्हें साधना पथ पर चलाना पड़ता है, भगवान की महिमा का वर्णन करके। वे अनपढ़ और विकृत मूर्तियाँ हैं, पर आपके विवेक, परिश्रम और साधना पर निर्भर करता है कि आप इन मूर्तियों को कैसा आकार दे पाते हैं।

कारागार में अपार संभावनायें हैं। जैसे सर्कस का दुर्दान्त शेद रिंग मास्टर के इशारों पर नाचता है, उसी प्रकार यदि आपमें विवेक है, सामर्थ्य है तो आप भी कारागार के दुर्द्धर्ष बन्दियों को अपने अनुरूप ढाल सकते हैं। वे आपके संकेतों पर पढ़ेंगे, लिखेंगे, गायेंगे, गुनगुनायेंगे, प्रार्थना करेंगे, भजन बोलेंगे और इन सब बातों को अपनी दिनचर्या में ढाल लेंगे। इन्हीं संभावनाओं को ध्यान में रखते हुए कारागार में बहुत कुछ सिखाया जाता है जैसे कम्प्यूटर, कृषि काष्ठ कला, फर्नीचर निर्माण, सिलाई, बागवानी, कताई–बुनाई आदि। यदि बन्दियों में पढ़ने की रुचि हो तो वहीं से परीक्षा देकर बी.ए., एम.ए. कर सकते हैं।

आइये, अन्तर बताते हैं। क्या है अन्तर कॉलेज के विद्यार्थी में और कारागार के बन्दी विद्यार्थी में। कॉलेज का विद्यार्थी प्रायः अनुशासनहीन, उद्दण्ड और कृतघ्न होता है जबकि कारागार का बन्दी विद्यार्थी परिस्थिति के बेड़ियों में जकड़े रहने के कारण अधिक अनुशासन प्रिय, विनम्र, कृतज्ञ और शिष्ट स्वभाव का होता है। वह हर पल अनुभव करता है कि यदि मेरे स्वभाव में परिवर्तन होगा, तभी मैं कारागार से मुक्त हो पाऊँगा। वह अपने गुरु के प्रत्येक वचन को मोती के समान चुनेगा। मैं जिन बन्दियों के सम्पर्क में आया, उनके स्वभाव में आशातीत परिवर्तन हुआ है। अब वे पूरी तरह ईश्वर के प्रति समर्पित हैं। वे प्रतिदिन वैदिक विधि से प्रातःकालीन मंत्र, सायंकालीन मंत्र, संध्या तथा संगठन सूत्र के मंत्र बोलते हैं। महीने में एक दिन हवन भी करते हैं। जब वे नेत्र बन्द करके प्रणव ध्वनि करते हैं और गायत्री मंत्र का उच्चारण करते हैं तो वे किसी साधक से कम प्रतीत नहीं होते हैं। मुझे कुछ बन्दियों ने पत्र लिखे हैं और उन पत्रों में लिखा है कि आर्य समाज ने हमारी आँखें खोल दी हैं।

बन्दियों के हृदय में आध्यात्मिक विचारों के प्रति रुझान हुआ है। वैदिक साहित्य की पुस्तकें पढ़ने के लिए उनके मन में लालसा बनी रहती है। अब तो एकाध पत्रिका में उनके आलेख भी छपने लगे हैं। उनके लिए कारागार एक तपःस्थली है। उन्होंने जीवन के रहस्य को समझ लिया है। अब उनके लिए कारागार गौण है, वे तो शरीर के कारागार से मुक्त होने का प्रयास कर रहे हैं। ऐसे बन्दियों के बीच जाना क्या मज़े की बात नहीं है? यह तो मेरे पिछले जन्म का कुछ पुण्य–प्रभाव रहा होगा। अपने बच्चों और अपने भाइयों के बीच जाने में किसे प्रसन्नता नहीं होगी?

यदि आपका कारागार के किसी अधिकारी से निकटता है तो आप सोचेंगे कि कहीं यह किसी बात पर नाराज होकर ज़ेल न भेज दे। मेरा नजरिया दूसरा है। मैं सोचता हूँ कि कहीं अमुक अधिकारी नाराज होकर यह न कह दे कि कल से ज़ेल मत आना। मेरे लिए तो यह मृत्यु के समान है, मेरे बच्चों को मेरे भाइयों को कौन प्रणव ध्वनि करायेगा? कौन संध्या करायेगा? कौन गीता पढ़ायेगा? मेरी तो सारी मेहनत चौपट हो जायेगी। मेरा तो सारा बाग ही उजड़ जायेगा। वहाँ तो पुलिस और बन्दियों के अलावा तीसरा व्यक्ति रहता ही नहीं।

आवश्यकता इस बात की है कि अब ज़ेल के प्रति नजरिया बदला जाय। उन्हें नये सिरे से परिभाषित किया जाय। अब ज़ेल की वे डरावनी दीवारें नहीं रह गई हैं। उन्होंने तो अब वेद मंत्रों, श्लोकों, सूक्तियों, दोहों तथा आदर्श वाक्यों से अपना शृंगार कर लिया है। आप वहाँ की हरियाली, सफाई, बगीचे, खेत, नर्सरी, आदि देखकर दंग रह जायेंगे। वे सवेरे उठकर प्रार्थना करते हैं फिर नाश्ता करके अपने–अपने कामों पर चले जाते हैं– खेतों में, बगीचों में, गौशाला में या सम्बन्धित केन्द्रों में। वे अध्यापक भी हैं, क्लर्क भी हैं, सफाई कर्मचारी भी हैं, नाई हैं तो लोहार भी हैं। सब कुछ हैं वे पर सब कुछ होने पर भी कुछ भी नहीं हैं क्योंकि वे समाज के द्वारा उपेक्षित हैं।

वास्तव में कारागार एक ऐसी विशाल संस्था है जहाँ प्रायः सभी विभाग है, सभी प्रकार के कर्मचारी हैं, वे कभी भी किसी से लड़ते नहीं, टकराते नहीं, चींटियों के समान चुपचाप मौन भाव से अपने काम में लगे रहते हैं। मन में उल्लास नहीं, उत्साह नहीं, नया कुछ नहीं करना, केवल पिछला भोगना ही भोगना है। वर्षों से माता–पिता, भाई–बहन, पत्नी, बच्चों से छिटके हुए वे स्वयं भी कभी भी जीवन से छिटक सकते हैं। उनके बीच जाना, पल दो पल उनसे बातें करना, उनके घावों पर मरहम लगाने के बराबर है। काश! कोई उनके दर्द को समझ पाता!

230, आर्य वानप्रस्थ आश्रम
ज्वालापुर (हरिद्वार)

आनन्द किन–किन परिस्थितियों में मिलता है

● खुशहाल चन्द्र आर्य

मैं लेख के शीर्षक के सम्बन्ध में कुछ लिखूँ उससे पहले मैं सुख और आनन्द में क्या अन्तर है, यह लिखना उचित समझता हूँ। सुख में दो अक्षर हैं। पहला 'सु' दूसरा 'ख'। 'सु' का तात्पर्य होता है अच्छा और 'ख' का तात्पर्य होता है इन्द्रियाँ। सुख का तात्पर्य हुआ जो पाँचों ज्ञानेन्द्रियों को अच्छा लगे वह सुख होता है और जो अच्छा न लगे वह दुःख होता है। जैसे अच्छा दृश्य, आँखों को अच्छा लगता है, यह आँखों का सुख हुआ। अच्छा गाना या भजन, कानों को अच्छा लगता है, यह कानों का सुख हुआ। इसी प्रकार अच्छा स्वादिष्ट भोजन जिह्वा (मुख) का सुख हुआ। अच्छा स्पर्श, त्वचा (चमड़ी) का सुख हुआ और अच्छी गन्ध, नाक का सुख हुआ। जिस काम को करने से आत्मा को सुख होता है, वह आनन्द कहलाता है। जैसे आपने किसी का उपकार किया और वह प्रसन्न होकर धन्यवाद देता, तब जो आत्मा को प्रसन्नता होती है, वह आनन्द कहलाता है। यहाँ यह बतलाना भी आवश्यक है कि पाँच ज्ञानेन्द्रियों के पाँच सुख या गुण और पाँच ही देवता होते हैं। जैसे आँखों का गुण है रूप और इसका देवता है अग्नि। जहाँ अग्नि यानी रोशनी होगी वहीं रूप दिखाई देगा। इसी प्रकार कान का गुण है शब्द और देवता है आकाश। जहाँ आकाश होगा यानी खाली जगह होगी, वहीं शब्द (आवाज़) सुनाई देगा और वह कानों से सुना जायेगा। इसी प्रकार जिह्वा का गुण है स्वाद और देवता है पानी। नाक का गुण है गन्ध (अच्छी या बुरी) और देवता है पृथ्वी। त्वचा का गुण है स्पर्श और देवता है हवा। इस प्रकार मनुष्य के पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ नाक, कान, आँख, जिह्वा और त्वचा। गुण है कान का शब्द, देवता आकाश, नाक का गुण गन्ध, देवता पृथ्वी, जिह्वा का गुण स्वाद, देवता पानी। जहाँ पानी होगा वहीं स्वाद होगा और वह जिह्वा द्वारा जाना जायेगा। त्वचा का गुण स्पर्श और देवता हवा। जहाँ हवा होगी तभी स्पर्श होगा और वह त्वचा द्वारा जाना जायेगा। इसी प्रकार आँखों का देवता अग्नि है, जहाँ अग्नि होगी वहीं रूप दिखाई देगा और वह आँखों के द्वारा देखा जायेगा। इस प्रकार हमारी पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ हैं। आँख, कान, नाक, जिह्वा, त्वचा और पाँचों के पाँच गुण रूप, शब्द, गन्ध स्वाद और स्पर्श हैं और इनके पाँच देवता अग्नि, आकाश, पृथ्वी, पानी और हवा क्रमशः हैं।

अब हमारे लेख का मुख्य उद्देश्य है, आनन्द किन–किन परिस्थितियों में आता है, सो आनन्द के भी दो भाग हैं। पहला आनन्द दूसरा परम् आनन्द। इनकी दो–दो स्थितियाँ हैं। आनन्द की स्थिति परोपकारी कार्यों में और गहरी निद्रा यानी सुषुप्ति अवस्था में। जब हम किसी दूसरे की भलाई का कार्य करते हैं, तो उस कार्य में हमें जो सुख मिलता है वह आनन्द कहलाता है कारण वह सुख किसी ज्ञानेन्द्रिय से नहीं ज्ञात होता बल्कि आत्मा को प्रतीत होता है, इसलिए वह आनन्द कहलाता है। इसी प्रकार गहरी निद्रा में हमें जो सुख प्राप्त होता है वह भी किसी ज्ञानेन्द्रिय को नहीं होता बल्कि आत्मा को होता है इसलिए यह

शेष पृष्ठ 09 पर ☞

आर्यसमाज का मुख्य उद्देश्य सत्य ज्ञान वेद का प्रचार कर अज्ञान को दूर करना

● मनमोहन कुमार आर्य

आर्यसमाज एक धार्मिक, सामाजिक, राष्ट्रीय, देश–समाज का रक्षक, अन्धविश्वासों से मुक्त तथा अन्धविश्वासों व सामाजिक कुरीतियों को दूर करने वाला विश्व के इतिहास में अपूर्व संगठन है। **विचार करने पर निष्कर्ष निकलता है कि आर्यसमाज का मुख्य उद्देश्य अविद्या का नाश तथा विद्या की वृद्धि करना है।** विद्या किसे कहते हैं और इसका स्रोत क्या है। इसका उत्तर है विद्या यथार्थ ज्ञान को कहते हैं। सत्य ज्ञान विद्या की कोटि में आता है। जो पदार्थ जैसा है उसको वैसा ही मानना व प्रतिपादित करना सत्य कहलाता है और वह सत्य ज्ञान ही विद्या है। इसके विपरीत जो ज्ञान सत्य की कसौटी पर खरा न हो वह अविद्या कहलाता है। **विद्या वा सत्य ज्ञान का स्रोत वेद है।** वेद ईश्वरीय ज्ञान है और इसमें जो कुछ कहा या बताया गया है वह सब सृष्टि के रचयिता ईश्वर द्वारा आदि ऋषियों को दिया गया ज्ञान है। ईश्वर ने उन आदि सृष्टि के चार ऋषियों को वेदों का ज्ञान उसे समस्त मनुष्यों तक प्रचारित करने के लिये दिया था। वेद विद्या के ग्रन्थ हैं और अविद्या से मुक्त हैं। वेद के अनुकूल ज्ञान को विद्या कहते हैं और जो कुछ वेदविरुद्ध है वह अविद्या कहा जाता है। **जो मनुष्य विद्या से युक्त होकर उसके अनुकूल आचरण करता है वही मनुष्य कहलाने का अधिकारी होता है।**

आर्यसमाज का मुख्य उद्देश्य वेद विद्या को जन–जन में प्रचारित करने का है जिससे वह अज्ञान से मुक्त होकर अपने सभी कर्म वेदानुकूल करके धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष के अधिकारी बन सके। यदि वह वेदानुकूल आचरण सहित वैदिक विधि से ईश्वरोपासना, अग्निहोत्र यज्ञ, पितृयज्ञ आदि नहीं करते तो वह धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष से वंचित रह जायेंगे। परमात्मा ने मनुष्य को आँखे देखने के लिये, कान सुनने के लिये, नाक सूँघने के लिये, त्वचा स्पर्श की अनुभूति कराने के लिये, मुँह बोलने तथा जिह्वा भक्ष्य पदार्थों का रस जानने व उसका भोग करने के लिये प्रदान की है। इसी प्रकार ईश्वर ने मनुष्य को अन्तःकरण चतुष्टय जिसमें मन, बुद्धि, चित्त व अहंकार हैं, प्रदान किये हैं। बुद्धि को भाषा व सांसारिक ज्ञान विज्ञान तक सीमित नहीं रखना चाहिये अपितु इससे वेदादि साहित्य का स्वाध्याय करके ईश्वर, जीवात्मा तथा कारण व कार्य प्रकृति का यथार्थ ज्ञान प्राप्त करके ईश्वरोपासना करके सृष्टि के भक्ष्य व सुख के पदार्थों का त्यागपूर्वक भोग करना चाहिये। लोभ की प्रवृत्ति, अधिक धन संग्रह व अपना सारा समय धन प्राप्ति में ही व्यय करना वित्तैषणा रूपी रोग का लक्षण है। महात्मा चाणक्य ने कहा है कि धन की तीन गति होती है प्रथम भोग, दूसरा दान तथा तीसरा नाश। यदि आपका धन त्यागपूर्वक भोग करने के बाद भी बच जाता है तो उसका दान कर देना चाहिये अन्यथा यह नाश का कारण होगा व हो सकता है।

विद्या प्राप्त मनुष्य ईश्वर व आत्मा के सत्यस्वरूप को जानकर ईश्वरोपासना से अपनी आत्मा के दोषों का निवारण करता है। ईश्वर की उपासना से मनुष्य की आत्मा के दोषों का निवारण होकर उसकी अपवित्रता दूर होकर पवित्रता प्राप्त होती है। **ईश्वर का साक्षात्कार होने पर संसार का सबसे बड़ा सुख ईश्वर का आनन्द मिलता है और इसके बाद वह मोक्ष को प्राप्त होकर 31 नील से अधिक वर्षों तक मोक्ष का सुख अर्थात् आनन्द को भोगता है।** दूसरी ओर वेदज्ञान विहीन लोग अविद्या से ग्रस्त होकर अज्ञान, अन्धविश्वास, मूर्तिपूजा, फलित ज्योतिष आदि का सेवन करके अपनी आत्मा को अधोगति की ओर ले जाकर दुःख, पीड़ा, कष्ट आदि को प्राप्त होते हैं। अंग्रेजी की कहावत है कि **'इग्नोरेंस इज द कौज ऑफ मिस्टरी'** अर्थात् अज्ञान ही दुःखों का कारण है यह वैदिक नियम का ही अनुवाद प्रतीत होता है। सृष्टि के आरम्भ से महाभारतकाल तक भारत में सहस्रों वेदज्ञानी ऋषि–मुनि होते थे। तब आर्यसमाज जैसे किसी संगठन की आवश्यकता नहीं थी। महाभारत के युद्ध में सभी व अधिकांश ऋषि एवं विद्वान नष्ट हो जाने के कारण अज्ञान, अन्धविश्वासों, कुरीतियाँ, मिथ्याचार, अन्याय, शोषण, अमानवीयता आदि में वृद्धि होने पर एक ऐसे संगठन की आवश्यकता अनुभव हुई जो इन बुराइयों को दूर कर सके। महाभारत के बाद ईसा के सन् 1863 तक देश अज्ञान, अन्धविश्वास व सत्यासत्य के ज्ञान से विमुख व बहुत दूर जा चुका था। ऐसे समय में महर्षि दयानन्द जी का आविर्भाव हुआ। उन्होंने संसार की सभी बुराइयों को दूर करने का उपाय सोचा। अपने गुरु स्वामी विरजानन्द सरस्वती जी की शिक्षा एवं प्रेरणा से उन्होंने सभी दुःखों का कारण अविद्या को जानकर इसके उन्मूलन में कार्य करने का निर्णय किया।

गुरु–शिष्य के परस्पर संवाद एवं निश्चय का परिणाम ही भविष्य में आर्यसमाज की स्थापना व इसके द्वारा वेदादि सत्साहित्य का प्रचार व प्रसार निश्चित हुआ। महर्षि दयानन्द ने सन् 1863 ईसवी से आर्यसमाज की स्थापना दिवस 10–4–1875 तक देश भर में घूम–घूम कर अज्ञान व अन्धविश्वासों सहित कुरीतियों एवं मिथ्या परम्पराओं का खण्डन किया और आर्यसमाज की स्थापना के बाद 30–10–1883 को मृत्यु होने के दिवस तक उनका अज्ञान व अन्धविश्वासों के खण्डन तथा विद्या के प्रचार–प्रसार का कार्य, जिसे वेद प्रचार कहा जाता है, जारी रहा। महर्षि दयानन्द ने अविद्या दूर करने के लिये अनेक कार्य किये। इसके लिये उन्होंने देश के अनेक भागों में जाकर उपदेश, प्रवचन तथा व्याख्यान द्वारा मौखिक प्रचार किया। लोगों की शंकाओं का समाधान किया। विपक्षी व विरोधियों से शास्त्रार्थ कर उनकी मिथ्या मान्यताओं का निर्मूलन किया। सत्यार्थ प्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, यजुर्वेद–ऋग्वेद (आंशिक) भाष्य, संस्कारविधि, आर्याभिविनय, पंचमहायज्ञविधि, व्यवहारभानु, गोकरुणानिधि आदि अनेकानेक ग्रन्थों का प्रणयन किया। सभी मत–मतान्तरों के आचार्यों को आमंत्रित कर एक सत्यमत वैदिक मत को स्थापित करने का प्रयत्न किया। मूर्तिपूजा, अवतारवाद, जन्मना–जातिवाद, बाल विवाह, बेमेल विवाह, छुआछूत, ऊँच–नीच, शिक्षा व अध्ययन–अध्यापन में पक्षपात को वेद विरुद्ध, ज्ञान विरुद्ध, न्याय विरुद्ध सहित तर्क व युक्ति विरुद्ध सिद्ध किया। महर्षि दयानन्द जी के बाद उनके द्वारा स्थापित आर्यसमाज और उसके प्रमुख विद्वानों स्वामी श्रद्धानन्द, पं. लेखराम, पं. गुरुदत्त विद्यार्थी, महात्मा हंसराज, स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती, पं. गणपति शर्मा, पं. कालूराम जी, स्वामी वेदानन्द तीर्थ, पं. शिवशंकर शर्मा, पं. बुद्धदेव मीरपुरी, पं. गंगा प्रसाद उपाध्याय, स्वामी विद्यानन्द सरस्वती, आचार्य डॉ. रामनाथ वेदालंकार जी आदि ने भी उनके कार्य को बढ़ाया। ऋषि दयानन्द जी व उनके अनुयायियों के कार्यों से जन्मना जातिवाद व ऊँच–नीच समाप्त हुई व कम हुई। स्त्री–शूद्र सहित सभी मनुष्यों को वेद और विद्याग्रहण करने का अधिकार प्राप्त हुआ। बाल विवाह, सती प्रथा, बेमेल विवाह बन्द हुए तथा गुण–कर्म–स्वभाव पर आधारित विवाह होने आरम्भ हुए और अब भी इनका प्रभाव निरन्तर वृद्धि को प्राप्त हो रहा है। देश आजाद हुआ। इसमें भी सबसे अधिक वैचारिक योगदान ऋषि दयानन्द जी का है तथा उनके अनुयायियों ने क्रान्तिकारी व अहिंसात्मक आन्दोलन में बढ़–चढ़ कर योगदान किया है। कुछ लोग ऐसे हैं जिनकी भूमिका अन्यों से कम रही परन्तु उन्हें सत्ता का सुख भोगने के अधिक अवसर मिले। आर्यसमाज सत्ता से दूर रहा है इसलिये राजनीति व राजनीतिक दलों में अज्ञान व भ्रष्टाचार आदि में वृद्धि हुई।

आर्यसमाज का अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि का जो आन्दोलन है वह कभी समाप्त न होने वाला आन्दोलन व प्रचार कार्य है। आर्यसमाज के द्वारा वैदिक सत्साहित्य की रचना व प्रचार से ईश्वर व जीवात्मा सहित मूल प्रकृति का सत्य स्वरूप पूरे विश्व के सम्मुख लाया गया है। अधिकांश लोग अपने स्वार्थों के कारण सत्य को स्वीकार नहीं कर रहे हैं और परिणामतः अपना ही अहित कर रहे हैं। जब उन्हें सद्ज्ञान प्राप्त होगा तो वह निश्चय ही आर्यसमाज की विचारधारा को अपनाकर अपना व अन्यों का कल्याण करने के मार्ग पर आयेंगे। सत्य का प्रचार ईश्वर का कार्य है। जो व्यक्ति असत्य में लिप्त व संलग्न है, वह ईश्वर की अवज्ञा कर रहा है। असत्य को छोड़े बिना व्यक्ति, परिवार व समाज की उन्नति नहीं हो सकती। आर्यसमाज और इसकी विचारधारा ही एकमात्र ऐसी विचारधारा है जो पूर्ण सत्य पर आधारित है और इसके अधिकांश अनुयायी सत्य का पालन करते हैं। आर्यसमाज का अज्ञान निवृत्ति का आन्दोलन अभी आरम्भ अवस्था में है। भविष्य में जितने लोग इसे अपनाते जायेंगे यह सफल होता जायेगा। सत्य पर आधारित होने के कारण हमें पूर्ण निश्चय है कि वेद और वैदिक धर्म ही भविष्य के विश्व के धर्म व मत होंगे। हमें अपनी ओर से जितना सम्भव हो वेद अर्थात् सत्य विद्याओं का प्रचार करना है। परिणाम ईश्वर के हाथों में है और वह हमेशा सत्य के पक्ष में ही होता है। ओ३म् शम्।

196 चुक्खूवाला–2, देहरादून–248001
फोन:09412985121

☞ *पृष्ठ 08 का शेष*

आनन्द किन ...

भी आनन्द कहलाता है।

इसी प्रकार परम् आनन्द भी दो अवस्था में आता है। पहली समाधि की स्थिति में और दूसरी मोक्ष की स्थिति में। जब मनुष्य अष्टांग योग करता है तब वह यम, नियम, आसन, प्राणयाम, प्रत्याहार, ध्यान, धारणा की स्थिति से गुज़र कर समाधि अवस्था में पहुँचता है तब जीवात्मा को अति सुख मिलता है, इसी को परम् आनन्द कहते है। वह समाधि की अवस्था में ही मिलता है। दूसरा परम् आनन्द मोक्ष की स्थिति में मिलता है। जब मनुष्य की मृत्यु हो जाती है तब जीवात्मा या तो दूसरी योनि, यानी दूसरे शरीर में चली जाती है, तब वह जीवात्मा परम् आनन्द से वंचित रहती है। परन्तु यदि उस जीवात्मा को मोक्ष मिल जाता है। तब वह जीवात्मा एक लम्बे समय तक यानी 31 मील 10 खरब 40 अरब वर्षों तक ईश्वर के सान्निध्य में रहते हुए परम् आनन्द की स्थिति में रहता है। अब प्रश्न उठता है कि मोक्ष तो मृत्यु के बाद मिलता है तो इसको शरीर से क्यों जोड़ा जाता है। इसका उत्तर यही है कि जीवात्मा तो अमर है, मरता तो शरीर है। चूँकी मोक्ष में जीवात्मा तो रहती ही है, परम् आनन्द तो जीवात्मा का विषय है, इसलिए हम मोक्ष की स्थिति को भी मानते हैं, जो जीवात्मा को शरीर छोड़ने के बाद मिलता है। इस प्रकार लेख के शीर्षक के अनुसार आनन्द और परम् आनन्द की स्थितियों का वर्णन कर दिया। अब लेखनी को विराम देते हैं।

180 महात्मा गाँधी रोड (दोतल्ला)
कोलकत्ता– 700007
मो. 9830135794

पत्र/कविता

सफलता उसको मिलती, कीमत जो दे पाय

हालत बदले हालात, हालत बदली जाय।
हालत सुधार कर सदा, हालात सुधर पाय।।

वजह खुशी की तू बने, खुश तब तू रह पाय।
हाथ मेंहदी रच रहा, वह खुद ही रच जाय।।

मेरा ईश्वर दे रहा, हर पल ही संदेश।
मैं मूरख मानू नहीं, ईश्वर का आदेश।।

बैठ अकेला खा रहा, खाता है वो पाप।
मिलजुल कर लेना सदा, यज्ञ शेष ही आप।।

बिन सोचे जो भी करे, सफल नहीं हो पाय।
केवल सोचे ना करे, मंजिल कैसे पाय।।

जीते अपने आप को, जीत वही तो पाय।
अपने मन से हारता, जीत नहीं वह पाय।।

मुश्किल तो इक आइना, करवाता आभास।
कितनी ताकत सहन की, देती है यह भास।।

सफलता उसको मिलती, कीमत जो दे पाय।
किसको कभी क्या मिला, बिना मोल चुकाय।।

खुद पर करे यकीन वो, कर सके चमत्कार।
खुद पर नहीं यकीन तो, फसे बीच मझधार।।

कल से लेकर सीख तू, वर्तमान जी जाय।
चिंता फिर करना नहीं, कल खुद ही बन जाय।।

नरेन्द्र आहूजा 'विवेक'
602, जी.एच.–53, सेक्टर–20,
पंचकुला (हरियाणा)
फोन 0172–4001895, 09467608686

आर्य समाज के सदस्यों के परिवार आर्य कैसे बने?

आज कल आर्य समाज के सदस्यों के परिवार बहुत कम ही आर्य हैं। पत्नियाँ पौराणिक सत्संगों में जाती हैं और पुत्र–पुत्रियाँ पश्चिमी सभ्यता से प्रभावित हैं इसलिए आर्य समाज के कार्यक्रम से दूर ही रहते हैं। आर्य समाज के कार्यक्रमों में केवल कुछ व्यक्ति ही जाते हैं इसलिए साप्ताहिक संत्सगों में भी हाजरी घट रही है। पुराने सदस्य दिवंगत हो रहे हैं और नये बनते ही नहीं हैं। इस तरह आर्य समाज कब तक चलेगा? महर्षि दयानन्द ने 31 दिसम्बर 1880 को आर्य समाज मुलतान के मंत्री मा. दयानन्द वर्मा को पत्र लिखा था कि आर्य समाज के लोग जनगणना में अपना धर्म वैदिक लिखायें और अपने घर में प्रातःसायं सन्ध्या और हवन किया करें परन्तु सब लोग अपना धर्म हिन्दू ही लिखा रहे हैं और घर में भी सन्ध्या हवन नही करते। केवल कुछ सदस्य ही अपने घर में ऐसा कर पा रहे हैं। इसलिए परिवार आर्य नही बन रहे, इसलिए वैदिक धर्म की स्थापना नही हो सकी, इसलिए आर्यजनों के परिवारों के सब व्यक्ति जिनकी आयु 18 वर्ष से अधिक है वह आर्य समाज के सदस्य बनें और परिवार सहित आर्य समाज के कार्यक्रमों में जाया करें। आज हमारे पुत्र और पुत्रियों के विवाह पौराणिक परिवारों में हो रहे हैं इसलिए आर्य नही बन रहे। आर्य परिवारों की सन्तानों के विवाह बिना जात पात का विचार किये आपस में ही करने चाहिएँ और सभी अपने नाम के साथ आर्य लगाया करें और सब स्थानों पर अपना धर्म वैदिक ही लिखाया करें। अपने घरों में कोई भी कार्य सिद्धान्त विरुद्ध न किया करें। ऐसा करने से ही आर्य समाज की उन्नति होगी हम लोग हिन्दुओं से अलग नही हैं। सुप्रीम कोर्ट के एक पूर्व न्यायधीश श्री जे.एस. वर्मा ने अपने दिनाँक 11–12–1995 के निर्णय में लिखा था कि हिन्दू कोई धर्म नही है यह तो एक जीने की शैली है आर्य समाज के लोग अगर उपयुक्त कार्यक्रमों को अपनायेंगे तभी आर्य समाज चलता रहेगा और उन्नति भी करेगा। हमारा प्राचीन नाम भी आर्य ही है आर्य समाज किसी की अलोचना ही न करे और सबसे प्रेम पूर्वक व्यवहार करे, परोपकारी बने।

अश्विनी कुमार पाठक आर्य,
107 बसुंधरा अपार्टमेन्ट से. 6
द्वारका नई दिल्ली

****

ज़हरीली हवा से कैसे बचें?

दिल्ली की हवा में इतना ज़हर तैर रहा है कि अस्पतालों में मरीजों का अंबार लगता जा रहा है। वायु–प्रदूषण के कारण पांच साल से छोटे लगभग एक लाख बच्चे हर साल अपनी जान से हाथ धो बैठते हैं। सर्वोच्च न्यायालय इतना परेशान हो गया है कि उसने दिवाली पर पटाखों पर तरह–तरह के प्रतिबंध लगा दिए हैं लेकिन आजकल पटाखों के बिना भी हवा इतनी जहरीली हो गई है कि कहीं–कहीं वह सामान्य से पांच गुना ज्यादा ज़हरीली है। सरकार ने जनता को हिदायत दी है कि लोग घरों से बाहर न निकलें, सुबह की सैर बंद करें और घरों में भी अगरबत्तियां वगैरह न जलाएं। सर्वोच्च न्यायालय द्वारा नियुक्त प्रदूषण नियंत्रण अधिकारी भूरेलाल ने कहा है कि यदि प्रदूषण का यही हाल रहा तो समस्त निजी वाहनों के चलने पर रोक लगा दी जाएगी। दिल्ली में पौने दो करोड़ निजी गाड़ियां पेट्रोल और डीजल से चलती हैं। इनमें से लाखों 10 से 20 साल पुरानी भी हैं। सर्वोच्च न्यायालय ने पेट्रोल की 15 साल और डीजल की 10 साल पुरानी कारों पर रोक लगा दी है लेकिन असली सवाल यह है कि क्या इस तरीके से वाकई प्रदूषण खत्म हो जाएगा? क्या यह व्यवहारिक तरीका है? पिछले साल दिल्ली सरकार ने सम–विषम नंबरों की कारों के लिए अलग–अलग दिन तय किए थे लेकिन प्रदूषण में कोई खास कमी नहीं हुई। सबसे पहली बात तो यह कि खेतों में पराली जलाने पर रोक लगनी चाहिए। दूसरी बात, दिल्ली की मुख्य सड़कों पर सिर्फ वे ही कारें चलनी चाहिए, जिनमें कम से कम चार सवारी हों। जिन कारों में कम सवारियां हों, उन्हें दिल्ली की अंदरुनी सड़कों पर चलने की इजाजत न हो। वाशिंगटन में मैंने इस व्यवस्था को लागू होते हुए 40 साल पहले देखा था। तीसरा, निजी वाहनों पर रोक लगाने की बजाय बसों और मेट्रो की पहुँच बढ़ाई जानी चाहिए। दिल्ली में 15000 बसें चलनी चाहिए लेकिन चलती हैं, सिर्फ 5000 । बस और मेट्रो का किराया इतना कम होना चाहिए और उनकी पहुँच इतनी ज्यादा होनी चाहिए कि लोग अपनी कारें अपने घर पर ही खड़ी रखें। चौथा, ट्रकों, टेक्सियों और आटो रिक्शाओं पर भी पूर्ण निगरानी रखी जानी चाहिए। ये प्रदूषण के बड़े स्रोत हैं। पांचवां, अब सौर ऊर्जा की क्रांति की बेहद जरुरत है। सौर–वाहन प्रदूषण के दुश्मन सिद्ध होंगे। पांचवा, दिल्ली ही क्यों, सर्वोच्च न्यायालय तो पूरे देश का न्यायालय है। कई प्रदेशों के कुछ शहर दुनिया के सबसे अधिक प्रदूषित शहरों में से हैं। उनके बारे में सरकारों, अदालतों और खुद जनता को ठोस पहल करनी चाहिए।

डॉ. वेदप्रताप वैदिक
dr.vaidik@gmail.com

****

अमरुद 'जामफल'

अमरुद या जामफल या अमृतफल गरीबो का फल है और प्रायः सर्दियों में आसानी से बाजार में मिल जाता है।

चरक संहिता के अनुसार स्वाद में मीठा होता है और उदर रोग में अति गुणकारी होता है। यदि आप को किसी भी प्रकार तक अमरुद फल का सेवन भर पेट करे। फल में नमक या किसी मसाले का प्रयोग न करे।

चरक संहिता के अनुसार अमरुद खाने से पहले उसके बीज हटा दे? अमरुद कफ, वीर्यवर्धक, पित्तदोषक, वात दोष नाशक और स्वास्थ वर्धक है। यह शक्ति दायक, सत्त्वगुणी एवं बुद्धिवर्धक है।

अमरुद में विटामिन सी प्रचुर मात्रा में होता है। हिमोग्लोबीन रोगीयों को इसका प्रयोग अवश्य करना चाहिये। चिकित्सकों के अनुसार अमरुद में फासफोरस और कैल्सियम भी प्रचार मात्रा में होता है।

वरिष्ठ सदस्यों को अमरुद संजीवनी औषधी के मानको को पूरा करेगा।

कृष्णा मोहन गोयल
113 बाजार कोट
अमरोहा उ.प्र.

****

डी.ए.वी. कॉलेज नकोदर में NCC के बटालियन कमांडर का दौरा

के.आर.एम. डी.ए.वी. कॉलेज में दूसरी पंजाब गर्ल्ज बटालियन जालंधर के कमांडिग अफसर श्री जसबीर सिंह (कर्नल) ने एक सामान्य दौरा किया। कॉलेज के NCC कैडेट्स की भर्ती की प्रशंसा करते हुए उन्होंने NCC Girls इंचार्ज प्रो. सुप्रिया को शुभकामनाएँ दी। उन्होंने NCC कैडेट्स के लिए प्राप्त अलग–अलग अवसरों पर प्रकाश डाला और कहा कैसे कैडेट्स अपनी शिक्षा के साथ–साथ देश की सेवा भी कर सकते हैं। उन्होंने कैडट्स के लिए रोजगार के मौकों

पर रोशनी डाली। प्रिंसीपल डॉ. अनूप कुमार ने कर्नल जसबीर सिंह का कॉलेज आने पर स्वागत किया और उन्होंने जो NCC Girls कैडेट्स का हौसला बढ़ाया उसके लिए उनका धन्यवाद भी किया। NCC Girls कैडेट्स के लिए कॉलेज में आगामी कैंप लगाने का सुझाव भी रखा गया। पिछले कैंप में जो NCC Girls कैडेट्स ने जो प्राप्तियाँ प्राप्त की इनके लिए उन्हें बधाई दी गई। मौकें पर प्रो. विनय कुमार की उपस्थित थे। अन्त में कर्नल जसबीर सिंह ने कॉलेज में पौधे भी लगाए और वातावरण की सफाई सभांल का संदेश भी दिया।

डी.ए.वी समाना में आयोजित हुई फूड ग्लेयर गतिविधि

डी.ए.वी स्कूल समाना में विश्व फूड दिवस के अवसर पर कक्षा दसवीं की फूड ग्लेयर तथा कक्षा तीसरी की बिना फायर फूड गतिविधि का आयोजन किया गया। यह गतिविधि बड़े ही आकर्षक ढंग से आयोजित की गई। बच्चों ने इस गतिविधि में बड़े ही हर्षोल्लास से भाग लिया। इस कार्यक्रम में श्रीमती रविंदर कौर तथा श्रीमती जैसमीन कौर मुख्य अतिथि के रूप में पधार कर इस गतिविधि की शोभा को बढ़ाया। इस अवसर पर अन्य गणमान्य अतिथियों ने भी शिरकत की 'सर्वप्रथम वैदिक संस्कृति के

अनुसार बच्चों द्वारा सस्वर मंत्र उच्चारण किया गया। तत्पश्चात् स्कूल के प्रधानाचार्य डॉ. मोहनलाल शर्मा द्वारा आए हुए मुख्य एवं गणमान्य अतिथि का पुष्पगुच्छ से अभिनंदन किया गया। इस गतिविधि में भिन्न–भिन्न देशों के व्यंजन प्रस्तुत किए गए। भारत के अलग–अलग प्रदेशों से भी कई प्रकार के व्यंजन पेश किए गए जिन्होंने वहाँ प्रस्तुत सब का मन मोह लिया। इस अवसर पर स्कूल के प्रधानाचार्य डॉ. मोहनलाल शर्मा ने मुख्य अतिथि का स्वागत एवं धन्यवाद करते हुए उन्हें सम्मानित करते हुए कहा कि इस प्रकार की गतिविधियाँ बच्चों में समूह में काम करने प्रेरणा को जागृत करने के साथ–साथ विदेशी संस्कृति और सभ्यता से परिचित भी करवातीं हैं। ताकि हमारे बच्चे जीवन के प्रत्येक पहलू से परिचित हो सकें।

आर्यसमाज मन्दिर, नकोदर में ऋषिनिर्वाण दिवस का आयोजन

आर्य समाज मन्दिर, नकोदर में ऋषिनिर्वाण दिवस एवम् दीपावली महोत्सव का आयोजन किया गया। इस महोत्सव का आरम्भ प्रातःकालीन यज्ञ के साथ किया गया, जिसमें सभी स्थानीय डी.ए.वी. की संस्थाओं के विद्यार्थियों एवं स्टॉफ ने बढ़–चढ़कर भाग लिया एवं आहुतियाँ डालीं गई। प्रसिद्ध भजन गायक श्री सुरिन्द्र गुलशन ने अपने मधुर भजनों द्वारा खूब समा बाँधा। डी.ए.वी. कॉलेज के प्रिंसीपल डॉ. अनूप कुमार ने अपने धारा प्रवाह

सम्बोधन में आर्यसमाज की विचारधारा पर आधारित प्रेरणादायक प्रवचन द्वारा उपस्थिति पर गहरी छाप छोड़ी। श्री प्रमोद भारद्वाज ने महर्षि दयानन्द सरस्वती को भावभीनी श्रद्धांजली अर्पित की तथा विद्यार्थियों एवं शिक्षकों को उनके दिखाए हुए मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित किया। श्री सोमदत्त मेहता ने समारोह में गायत्री मन्त्र का पाठ किया और उपस्थित सभी विद्यार्थियों एवं शिक्षकों को आशीर्वाद दिया। इस अवसर प्रो. आर.एन. नागर और श्री सुरिन्द्र गुलशन को सम्मानित किया गया। इस अवसर पर डॉ. सलिल कुमार ने आए हुए सभी महानुभावों का स्वागत किया।

आर्य समाज वसंत कुंज में वैदिक ज्ञान व संस्कृति का प्रचार-प्रसार

आर्य समाज वसंत कुंज अपने साप्ताहिक सत्संग कार्यक्रम के अन्तर्गत वैदिक ज्ञान व संस्कृति के सतत प्रचार व प्रसार हेतु वसंत कुंज के जाने माने लेखक, विचारक व चिंतक श्री संतोष कुमार शर्मा को अतिथि वक्ता के रूप में आमन्त्रित किया। अपने सारगर्भित व संक्षिप्त भाषण में श्री शर्मा ने कहा कि पश्चिमी चिंतन व विचारधारा के स्थान पर हमें स्वदेशी विचारधारा को अपनाने की आवश्यकता है। देश के सहकारिता आन्दोलन के सन्दर्भ में उन्होंने स्पष्ट किया कि सहकारिता योरप या अमेरिका की देन नहीं हैं। सहकारिता की विचारधारा हमें हजारों वर्षों पूर्व ऋग्वेद में मिलती है।

मंत्रमुग्ध श्रोताओं के समक्ष अपने विचार रखते हुये श्री आर्मा ने आगे कहा कि आज समूचा विश्व जलवायु परिवर्तन, भूकम्प, बाढ़, तूफान जैसी प्राकृतिक आपदाओं को झेल रहा है। इसलिये सम्पूर्ण विश्व की चाहत सतत् विकास Sustainable Development के लिये है। श्री शर्मा ने पुरज़ोर शब्दों में कहा कि सतत् विकास के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिये हमें एक बार पुनः अपने देश के वैदिक ज्ञान की ओर लौटना होगा। वेद व आर्ष साहित्य भारतीय दर्शन के आधार स्तम्भ हैं।

जोहड़ व तालाबों के संरक्षण में लापरवाही के कारण दिल्ली समेत देश के कई स्थानों पर घटते जल स्तर के प्रति श्री शर्मा ने चिन्ता व्यक्त करते हुये कहा कि हमारे प्राचीन धार्मिक संस्कारों व रीति रिवाज़ों की वैज्ञानिकता को समझते हुये उन्हें पुनः जीवित करते हुये देश की नई पीढ़ी को इन्हें अपनाने के लिये प्रेरित करना होगा।

Registration No. R.N.I. 39\57
Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11\6066\2018-20
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103\2018-20
Posted at N.D.P.S.O. ON 14/15-11-2018

डी.ए.वी. सेक्टर-49, गुरुग्राम में रामायण का नाट्य मंचन

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, सेक्टर-49, गुरुग्राम, के प्रांगण में किंडर्गार्टेन के बच्चों द्वारा रामायण के नाट्य मंचन का आयोजन बड़े ही भव्य रूप से किया गया। मनुष्य अपनी संस्कृति एवं सभ्यता से जुड़े रहकर ही ऊँचाइयों को छू सकता है । अपने पारंपरिक मूल्यों का वहन करते हुए विद्यार्थी आधुनिकता की ओर अग्रसर हों, यही डी.ए.वी. के आदर्श हैं। वाल्मीकि द्वारा रचित महाकाव्य 'रामायण' ऐसे ही अनेक जीवन मूल्यों को अपने अंदर समाए हुए है। यह हमें सीख देता है कि सामाजिक मूल्य व्यक्ति के हित और स्वार्थ से ऊपर होते हैं।

इस अवसर पर मुख्य अतिथि के रूप में डी.ए.वी. कॉलेज प्रबंधकर्त्री समिति के उपप्रधान तथा विद्यालय के चेयरमेन श्री प्रबोध महाजन, डी.ए.वी. विद्यालय के वाइस चेयरमेन श्री योगेश मुंजाल, विद्यालय की प्रबंधक श्रीमती आदर्श कोहली, स्थानीय प्रबंधकर्त्री समिति के अन्य प्रमुख सदस्य तथा अन्य कई विशिष्ट अतिथिगण उपस्थित थे। विद्यालय की प्रधानाचार्या श्रीमती चारु मैनी ने भेंट स्वरूप 'नई पौध' प्रदान करते हुए इन सभी गणमान्य अतिथियों का हार्दिक स्वागत किया। अभिभावक भी इस अवसर पर उपस्थित होकर अत्यंत गौरवान्वित हुए।

श्री प्रबोध महाजन ने अभिभावकों को संबोधित करते हुए उन्हें महर्षि दयानंद के जीवन के आदर्शों पर चलने और अपने बच्चों को वैदिक संस्कृति से अवगत कराने के लिए प्रेरित किया।

कार्यक्रम का आरंभ डी.ए.वी. गान तथा शास्त्रीय नृत्य 'भूमि मंगलम' से किया गया। तदुपरांत मुख्य अतिथियों द्वारा यू.के.जी. के बच्चों की सह पाठ्यक्रम गतिविधियों में प्राप्त उपलब्धियों के लिए उन्हें पुरस्कृत किया गया। तत्पश्चात् किंडर्गार्टेन के छोटे-छोटे बच्चों ने रामायण के उदात्त मूल्यों को प्रेषित करते हुए नृत्य एवं रम्य गीतों से सजा हुआ यह नाट्य प्रस्तुत किया। बच्चों के हाव-भाव, उनके आत्मविश्वास एवं अभिनय कौशल ने वहाँ उपस्थित सभी लोगों को मंत्रमुग्ध कर दिया। इन नन्हें मुन्हें बच्चों के द्वारा की गई ऐसी प्रस्तुति की सबने सराहना की। इस प्रकार राष्ट्रगान के साथ इस कार्यक्रम की सरलतापूर्वक समाप्ति की गई।

एल.आर.एस. डी.ए.वी. अबोहर में प्रदूषण मुक्त दिवाली मनाने का संकल्प

एल.आर.एस. डी.ए.वी. सीनियर सेकेंडरी मॉडल स्कूल अबोहर की आर्य युवा समाज शाखा व सामाजिक गतिविधियाँ विभाग द्वारा दीपावली त्यौहार की खुशियों को आर्य नगर में स्थित महात्मा गांधी डी.ए.वी. स्कूल के विद्यार्थियों के साथ मनाकर सांझा किया गया। इस अवसर पर सातवीं कक्षा के सभी बच्चों द्वारा महात्मा गांधी स्कूल का अवलोकन किया गया व बच्चों के संग मिलकर उनको बिस्कुट और स्कूल यूनिफार्म भेंट की गई। डी.ए.वी. स्कूल के विद्यार्थियों ने आगामी वर्ष के सभी त्योहारों को महात्मा गांधी स्कूल में जाकर विद्यार्थियों के साथ मनाने का प्रण लिया ।

उधर स्कूल में आयोजित प्रातःकालीन प्रार्थना सभा में प्रिंसीपल श्रीमती स्मिता शर्मा ने विद्यार्थियों को दीपावली पर्व की शुभकामनाएं दी व दीपावली पर्व पर पटाखे न चलाने के लिए प्रेरित किया। श्रीमती शर्मा ने कहा की धरती पर प्रदूषण दिन-ब-दिन बढ़ रहा है इसलिए हमने दीपावली पर्व पर पटाखे न चलाकर धरती को प्रदूषण मुक्त बनाने का प्रण लेना है। सभी विद्यार्थियों ने एक साथ प्रण किया कि वे दीपावली पर पटाखे बिल्कुल नहीं चलाएगें बल्कि पिछड़ी बस्तियों के गरीब बच्चों के साथ जाकर अपनी दीपावली को मनाएंगे। इस अवसर पर विद्यालय के प्रांगण में रंगोली बनाई गई व दीप भी प्रज्ज्वलित किए गए। इस कार्यक्रम में स्कूल चेयरमैन श्री देव मित्र आहूजा विशेष रूप से उपस्थित थे। श्री आहूजा जी द्वारा सभी विद्यार्थियों व स्टाफ को दीपावली पर्व की शुभकामनाएं दी गई व दीपावली पर्व को खुशी-खुशी मनाने का आह्वान किया गया ।

डी.ए.वी. बिलगा के विद्यार्थियों ने चलाया सतलुज़ सफ़ाई अभियान

शीला रानी तांगड़ो डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल बिलगा के नन्हें मुन्ने विद्यार्थी गाँव के साथ लगते गाँव मियोवाल में सतलुज दरिया के किनारे गए और जहाँ एक तरफ दूसरी कक्षा के छात्र-छात्राओं ने जहाँ एक तरफ जल स्रोत देखा वहीं दरिया किनारे की सफाई की। यह परियोजना सैंटर फॉर एनवायरमैंट एजुकेशन के अंतर्गत की गई।

इस अवसर पर प्रि. रवि शर्मा ने कहा कि इस तरह की परियोजनाएँ लेने से छोटे बच्चों में सामाजिक उत्तरदायित्वों के प्रति संवेदनशीलता का संचार होता है इस अवसर पर परमिन्दर कौर, निहारिका, प्रभजीत और मनप्रीत भी विशेष रूप से विद्यार्थियों के साथ इस अभियान में उनके साथ थे।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मंदिर मार्ग के लिए **एस.के शर्मा** द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित **अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि.,** डब्ल्यू-30, ओखला, फेस-II, नई दिल्ली-110020 (दूरभाष : 26388830-32) से मुद्रित एवं कार्यालय **'आर्य जगत्'** आर्यसमाज भवन मंदिर मार्ग नई दिल्ली से प्रकाशित मो.-9868894601, 23362110, 23360059 सम्पादक - **पूनम सूरी**